DCEPS-103
अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड – 1

शीतयुद्ध का अन्त और उसके भावी दृष्टिकोण

इकाई – 13 3

बदलती विश्व व्यवस्था सम्बन्धी दृष्टिकोण

इकाई – 14 11

उत्तर दक्षिण दृष्टिकोण संवाद

इकाई – 15 21

विश्व व्यवस्था का बहुध्रुवीयकरण

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

कुलपति एवं मार्गदर्शक

प्रो. सीमा सिंह — **उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज**

विशेषज्ञ समिति

(1) **प्रो. एम. पी. सिंह – सदस्य**
प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, 34 उत्तरांचल अपार्टमेंट, 5, आईपी एक्सटेंशन पटपड़गंज, नई दिल्ली

(2) **प्रो. एस.पी. एम त्रिपाठी – सदस्य**
प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

(3) **प्रो.एल.आर.गुर्जर – सदस्य**
प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, वर्धमान महावीर मुक्त विश्वविद्यालय, कोटा राजस्थान

(4) **डॉ.दीपशिखा श्रीवास्तव – सचिव**
शैक्षणिक परामर्शदाता ,राजनीतिक विज्ञान विभाग, यू.पी.आर.टी.ओ.यू ,प्रयागराज

लेखक

1. **प्रो0 संजय श्रीवास्तव** — **प्रोफेसर, राजनीतिक विज्ञान,**
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय
(इकाई–04, 05, 15)

2. **डॉ0 विश्वनाथ मिश्रा** — **असि0 प्रोफेसर, राजनीतिक विज्ञान**
आर0 महिला पी0जी0 कालेज वाराणसी
(इकाई– 06, 07, 08, 09, 10, 11, 12)

3. **डॉ0 स्वाती सुचरिता नन्दा** — **असि. प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान**
डी0ए0वी0 पी0जी0 कालेज वाराणसी
(इकाई–01, 02, 03, 21, 22, 23)

4. **डॉ0 अर्चना सुदेश मैथ्यू** — **असि. प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान**
पी0जी0 कालेज छिन्दवाड़ा, मध्य प्रदेश
(इकाई–13, 14, 16, 17, 18)

5. **डॉ दीपशिखा श्रीवास्तव** — **शैक्षणिक परामर्शदाता, राजनीतिक विज्ञान**
यू.पी.आर.टी.ओ.यू ,प्रयागराज
(इकाई– 19, 20)

संपादक / परिमापक

डॉ. नागेश्वर प्रसाद शुक्ला — प्राचार्य गन्ना उत्पादक पी0जी0 कालेज, बहेड़ी, बरेली

समन्वयक

डॉ. दीपशिखा श्रीवास्तव, — शैक्षणिक परामर्शदाता, राजनीतिक विज्ञान विभाग, यू.पी.आर.टी.ओ.यू, प्रयागराज

(मुद्रित)

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0 International License.

ISBN- 978-93-83328-37-6

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन – उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज–211021

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से कर्नल विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित – 2025

NFT-173

DCEPS-103/2

मुद्रक : चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा0 लि0 42/7 जवाहर लाल नेहरु रोड प्रयागराज

इकाई-13

बदलती विश्व व्यवस्था सम्बन्धी दृष्टिकोण

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 नयी विश्व व्यवस्था : अभिप्राय एवं नवीन प्रवृत्तियाँ

13.2.1 अभिप्राय

13.2.2 नूतन प्रवृत्तियाँ

13.3 विविध दृष्टिकोण

13.3.1 यथार्थवादी दृष्टिकोण

13.3.2 उदारवादी दृष्टिकोण

13.3.3 मार्क्सवादी दृष्टिकोण

13.4 विभिन्न देशों के दृष्टिकोण

13.4.1 अमेरिकी दृष्टिकोण

13.4.2 रूसी दृष्टिकोण

13.4.3 चीनी दृष्टिकोण

13.4.4 यूरोपीय दृष्टिकोण

13.4.5 विकासशील देशों का दृष्टिकोण

13.5 सारांश

13.6 शब्दावली

13.7 बोध प्रश्न

13.8 संदर्भ ग्रंथ

13.0 उद्देश्य

इस इकाई में शीतयुद्ध के पश्चात् बदलती विश्व व्यवस्था के स्वरूप और सम्बन्ध पर विचार किया गया है।

1. इसका उद्देश्य नई विश्व व्यवस्था के अर्थ और वैश्विक नवीन प्रकृतियों को समझना है।
2. इस सम्बन्ध में विकसित विविध दृष्टिकोण पर प्रकाश डालना जिससे नई विश्व व्यवस्था का निरूपण किया जा सके।

13.1 प्रस्तावना

खाड़ी युद्ध की समाप्ति के पश्चात् अमेरिका के तात्कालिक राष्ट्रपति जार्ज बुश ने सबसे पहले नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की बात की थी और इसके बाद नई विश्व व्यवस्था चर्चा और अध्ययन का प्रमुख बिन्दु बन गया। इसी समय अमेरिकी विद्वान फ्रान्सिस फुकुयामा के 1989 के लेख इतिहास का अन्त ने नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था को सैद्धान्तिक आधार प्रदान कर दिया। साम्यवादी हार के पश्चात् उदार लोकतंत्र की स्थापना के साथ नये युग का सूत्रपात मान लिया गया।

13.2 नई विश्व व्यवस्था अभिप्राय एवं नूतन प्रवृत्तियाँ

13.2.1 अभिप्राय

नई विश्व व्यवस्था से हमारा अभिप्राय क्या है? विश्व व्यवस्था की संरचना यू.एन.ओ. यथावत् है। पुरानी व्यवस्थावाद का उन्मूलन नहीं हुआ है। फिर भी हम इसे नई विश्व व्यवस्था कह रहे हैं। इससे भ्रम उत्पन्न होना स्वाभाविक है। किन्तु इसे नई विश्व व्यवस्था कह रहे हैं। इससे भ्रम उत्पन्न होगा स्वाभाविक है। किन्तु इसे नई विश्वव्यवस्था किस अभिप्राय में लेते हैं? यह जानना आवश्यक है। साम्यवादी व्यवस्थाओं के पतन के पूर्व विश्व दो खेमों में बंटा था। एक का नेतृत्व संयुक्त राज्य अमेरिका कर रहा था और दूसरे खेमें का नेतृत्व सोवियत रूस कर रहा था। इनमें पारस्परिक वैचारिक विरोध एवं वर्चस्व हेतु संघर्ष था। इससे जो तनाव, अशांति की स्थिति बनती थी उसे ही शीत युद्ध कहा गया। सोवियत संघ के पतन के साथ ही साम्यवादी विचारधारा को करारा झटका लगा और उसकी लौ धीमी हो गयी। अमेरिका का वर्चस्व तथा पूँजीवादी उदारवादी लोकतंत्र की विचारधारा को तेजी से प्रसार का अवसर प्राप्त हो गया। इससे अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों एवं राजनीति के समीकरण तथा अंतर्वस्तु के बदलाव परिलक्षित हुए और यह अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों एवं राजनीति के लिए नई बात थी। यही नूतनता ही नई विश्व व्यवस्था का निरूपण करती है। इसमें नूतनव्यता प्रमुख रूप से जो नूतनता आयी हैं वे हैं विश्व व्यवस्था का द्विध्रुवीय का समाप्त हो जान, शीत युद्ध की समाप्ति, अमेरिकी वर्चस्व की स्थापना, राजनीतिक कारको के स्थान पर आर्थिक कारकों का महत्व बढ़ जान, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में संप्रभु राज्यों के साथ राज्येत्तर संस्थाओं का उभरकर आना आदि।

13.2.2 नूतन प्रवृत्तियाँ

विश्व व्यवस्था में आयी नूतनता के कारण विश्व व्यवस्था के चरित्र में काफी बदलाव आया है। इससे उसे अपने को नये-सिरे से अनुकूलित करना पड़ रहा है। बदलती विश्व व्यवस्था की प्रकृति को समझने के लिए यह आवश्यक है कि उसकी इन नूतन प्रवृत्तियों के विषय में जानकारी ले लें। इससे नई विश्व व्यवस्था के निरूपण में भी सहायता प्राप्त होगी। इन उभरती नवीन प्रवृत्तियों को निम्न रूप से स्पष्ट किया जा सकता है -

1. **उदारीकरण को बढ़ावाः-** सोवियत संघ के बिखरने के बाद खुली और उदारवादी अर्थव्यवस्था के समर्थक खुलकर सामने आ गये। मुक्त व्यापार, खुली प्रतिस्पर्धा, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठनों का बढ़ता प्रभुत्व और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के विस्तार ने उदारवादी लोकतंत्र को ही विकास का एकमात्र रास्ता घोषित कर दिया। अब नागरिक नहीं

उपभोक्ता महत्वपूर्ण हो गये है, वैश्विक एकीकरण और एकरूपता पर बल दिया जाने लगा है और समाजवादी लोकतंत्र के स्थान पर बाजारवादी लोकतंत्र को स्थापित करने के प्रयास तेज हो गये हैं। इसे ही उदारीकरण की संज्ञा प्राप्त हुई है। विकास के लिए उदारीकरण को आवश्यक माना जा रहा है। इसके तहत लार्ड जैसे राज्य की समाप्ति, आयात-निर्यात नियमों में ढील, निजी क्षेत्र को बढ़ावा तथा प्रतिस्पर्धात्मक वातावरण का उदय आदि तत्व गतिशील रहते हैं।

2. **सूचना और संचार क्रांतिः-** विज्ञान और तकनीक के विकास ने दुनिया को छोटा कर दिया है। आज नेटवर्क सोसायटी या सूचना समाज महत्वपूर्ण हो गया है, हर हाथ में मोबाइल मानो अनिवार्य आवश्यकता है। टी.वी. कम्प्यूटर के जरिये सूचना और संचार क्रांति ने मिनटों में दुनिया के किसी भी कोने तक पहुँचना संभव कर दिया है। नई विश्व व्यवस्था में सूचना और संचार माध्यमों पर प्रभुत्व ही शक्ति का परिचायक है और इन माध्यमों पर राष्ट्रों का नहीं बल्कि चार बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ का 90 प्रतिशत सूचना प्रवाह पर नियंत्रण है। इसे कुछ लोग सांस्कृतिक उप निवेशवाद के खतरे के रूप में भी देखते हैं।

3. **एक ध्रुवीय विश्वः-** आज अमेरिका ही शक्ति का केन्द्र बन गया है, इसे ही एक ध्रुवीकरण कहा जाता है। खाड़ी युद्ध हो या इराक पर लगाम लगाना हो या सीरिया में हस्तक्षेप अमेरिका का प्रभुत्व हर जगह है। अमेरिका न केवल सर्वश्रेष्ठ सैनिक शक्ति सम्पन्न है वरन् दुनिया की सर्वशक्तिशाली अर्थव्यवस्था भी है। विश्व बैंक की 2007 की रिपोर्ट के अनुसार विश्व की GDP में अमेरिका का 22.5 प्रतिशत भाग है, इसी के चलते विश्व बैंक हो या संयुक्त राष्ट्र संघ अमेरिका का प्रभुत्व हर जगह है। कुछ लोगों का ऐसा भी विचार है कि विश्व एक ध्रुवीय नहीं है। विश्व बहुध्रुवीय हो गया है।

4. **बहुध्रुवीय विश्वः-** आज अमेरिका के वर्चस्व को चुनौती देता चीन तेजी से उभर रहा है। ऐसा अनुमान है कि एक दशक में चीनी अर्थव्यवस्था अमेरिका को पीछे छोड़ सकती है। यूरोपीय संघ की आर्थिक सफलता और एक जुटता ने उसे भी शक्ति का केन्द्र बना दिया है। जापान की तकनीकी श्रेष्ठता उसे सशक्त बना रही है, और विश्व एक ध्रुवीय से बहुध्रुवीयकरण की ओर बढ़ रहा है।

5. **विश्व व्यापार संगठन का बढ़ता प्रभुत्वः-** वर्तमान में WTO के सदस्य राज्यों की संख्या 160 हो गई है। अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का संचालक WTO ही है। यह संस्था न सिर्फ प्रभावशाली है, बल्कि कानूनी दृष्टि से भी सशक्त है। बहुपक्षीय समझौते और उनसे जुड़े कानूनी प्रभावों के चलते नई विश्व व्यवस्था के साधन के रूप भी विश्व व्यापार संगठन सबसे प्रभावी है।

6. **नवीन अन्तर्राष्ट्रीय मुद्देः -** नई विश्व व्यवस्था के मुद्दे भी नवीन है। आज लोकतंत्र बनाम साम्यवाद, निःशस्त्रीकरण, गुटनिरपेक्षता आदि पुराने मुद्दों के स्थान पर मानवाधिकार, पर्यावरण, विश्व व्यापार, सीमापार आतंकवाद नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की माँग, आर्थिक गुटबंदी आदि विषय महत्वपूर्ण हो गये है।

इस प्रकार इन प्रवृत्तियों ने विश्व व्यवस्था के व्यवहार में तीव्रगति से बदलाव किया है। इस बदलाव को ही हम नई विश्व व्यवस्था के नाम से जानते हैं।

13.3 विविध दृष्टिकोण

नई विश्व व्यवस्था को लेकर काफी मतभेद है। लोग अपने-अपने दृष्टिकोण से इस पर प्रकाश डालते हैं। इससे कई दृष्टिकोण अस्तित्व में आये। इसे हम दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं - विचारधारा के आधार पर और राष्ट्रों की अपनी सोच के आधार पर। विचारधाराओं के आधार पर प्रमुख दृष्टिकोण निम्नवत् है :

13.3.1 यथार्थवादी दृष्टिकोण

यह दृष्टिकोण नयी विश्व व्यवस्था को स्वीकार नहीं करता। साथ ही यथार्थवादी दृष्टि नयी विश्व व्यवस्था की मुख्य विशेषता न्याय को भी नहीं मानता बल्कि यह इसे राज्यों के मध्य सत्ता वितरण में परिवर्तन को मानता है। यथार्थवादियों के अनुसार सोवियत संघ के विघटन से सत्ता समीकरण बदले है। सोवियत संघ ने लम्बे समय तक अमेरिका जापान पर काफी हद तक नियंत्रण करने में सफल रहा था। अमेरिका द्वारा अफगानिस्तान और इराक पर आक्रमण की स्थितियाँ भिन्न होती यदि सोवियत संघ का बिखराव नहीं हुआ होता। महाशक्ति होता। किन्तु अब सत्ता के केन्द्रीयकरण ने न्याय की परिभाषा ही बदल दी है।

13.3.2 उदारवादी दृष्टिकोण

इस दृष्टिकोण द्वारा नयी विश्व व्यवस्था को साम्यवाद की हार और उदार पूँजीवाद की जीत के रूप में देखा जा सकता है। अमेरिकी विचारक फ्रांसिस फुकुयामा के अनुसार उदार पूँजीवाद का अब कोई प्रतिस्पर्धा नहीं रहा। विश्व एकीकृत विश्व व्यवस्था की ओर बढ़ रहा है। नयी विश्व व्यवस्था में उदार पूँजीवाद ही विकास का एकमात्र मार्ग है। यद्यपि उदार पूँजीवाद के विरोधी भी हैं पर वे बिखरे हुए हैं, जैसे नव माओवाद्, इस्लामिक कट्टरवाद आदि पर अभी उन्हें उदार पूँजीवाद से प्रतियोगिता करने में काफी समय लगेगा।

13.3.3 मार्क्सवादी दृष्टिकोण

सोवियत संघ के बिखराव के बाद भी विश्व में मार्क्सवादी दृष्टिकोण के अनेक समर्थक है। इनका मानना है कि उदार लोकतंत्र पुनः दुनिया में जो अमीरी-गरीबी के मध्य जो खाई उत्पन्न कर रहा है तथा उदारीकरण और बाजारीकरण के बढ़ते दुष्परिणामों से मुक्त कराने में मार्क्सवाद ही सक्षम है। अतः अब पुनः मार्क्सवादियों को एकजुट होकर अपनी ताकत बढ़ाने, समाजवादी विकृत्तियों को दूर करने और दुनिया के सामने सशक्त विकल्प के रूप में आने का समय है। वे मार्क्सवाद या साम्यवाद की समाप्ति की घोषणा को एक सिरे से अस्वीकार करते हैं। वे आशावादी है कि पूँजीवादी शोषण और आर्थिक असमानता पुनः मार्क्सवादियों के लिए अवसर प्रदान करेगी।

13.4 विभिन्न देशों के दृष्टिकोण

अभी हमने सैद्धान्तिक विचारधारा के आधार पर विभिन्न दृष्टिकोणों को देखा। अब विश्व के महत्वपूर्ण देशों की सरकारों की दृष्टि के आधार पर नई विश्व व्यवस्था का विवेचन निम्नवत् है

13.4.1 अमेरिकी दृष्टिकोण

अमेरिका स्वयं को दुनिया का सर्वाधिक प्रभावशाली और शक्तिशाली राष्ट्र मानता है। अतः विश्व के नेतृत्व की जिम्मेदारी भी अमेरिका की ही है। लोकतंत्र की रक्षा, अन्तर्राष्ट्रीय शांति व्यवस्था बनाये रखने वैश्वीकरण की प्रक्रिया तेज करने जैसे उद्देश्यों को पूरा करना अमेरिका आवश्यक मानता है। उक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए दूसरे देशों में हस्तक्षेप को भी वह गलत नहीं मानता। विश्व में परमाणु सम्पन्न देशों में वृद्धि न हो, परमाणु बम निर्माण में लगे नये देशों पर प्रतिबन्ध रखना, इराक में संयुक्त राष्ट्र संघ के विरोध के बाद भी हस्तक्षेप करना, अफगानिस्तान में हस्तक्षेप, सीरिया विवाद आदि अनेक अमेरिकी हस्तक्षेप के उदाहरण है, यूरोप जो कि उसका प्रतिद्वन्द्वी हो सकता है, वर्तमान में उसी के पक्ष में है। अतः अमेरिका स्वयं को सर्वशक्तिमान और निर्भय मानता है। यह एक ध्रुवीय व्यवस्था स्थायी नहीं है। इसका अंदेशा भी अमेरिका को है। चीन को प्रतिद्वन्द्वी के तौर पर देखा जा रहा है। यद्यपि अभी अमेरिका और यूरोपीय संघ में आपसी रिश्ते प्रगाढ़ है और अब तक अमेरिका के सुर में सुर मिलाने का काम ही यूरोपीय देश करते रहे हैं। लेकिन अमेरिकी रूस के मतभेद अभी भी सामने आते हैं साथ ही चीन से निपटने के लिए अमेरिका का रवैया भारत के प्रति नम्र और उदार हुआ है, ताकि नई विश्व व्यवस्था में अमेरिका की प्रभुता बनी रहे।

13.4.2 रूसी दृष्टिकोण

शीत युद्ध के दौरान साम्यवादी पताका लिये सोवियत संघ विश्व की दो महाशक्तियों में से एक था। विभाजन के बाद इसे रूस कहा जाने लगा है। रूस घरेलू समस्याओं जैसे आर्थिक विकास, स्वतंत्र हुए नये राष्ट्रों के बीच मतभेद तथा विवादों को निपटाने जैसी समस्या से ग्रसित है। रूस ने यद्यपि खुली अर्थव्यवस्था, निजीकरण और वैश्वीकरण के नये परिवर्तनों के साथ समझौता कर लिया है, साम्यवादी व्यवस्था में जिसका वह घोर विरोधी था फिर भी वैश्विक आर्थिक प्रतिस्पर्धा में बने रहने के लिए उसने राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखकर अमेरिका, यूरोप और आर्थिक संगठनों जैसे अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन आदि से तालमेल बिठानें और उनका विश्वास अर्जित करने का प्रयास कर रहा है। विश्व भले ही रूस को महाशक्ति न माने रूस सदैव स्वयं को महाशक्ति मानता है। अभी अपने विश्व आर्थिक विकास और राजनीतिक, सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये रूस ने स्वयं को विश्व की समस्याओं से दूर कर लिया है, शस्त्रों की होड़ छोड़कर वह राष्ट्रीय सुधारों में लगा है। इस हेतु अमेरिका, जापान, यूरोप सभी से अपने रिश्ते सुधार रहा है। इसलिए नई विश्व व्यवस्था को लेकर रूस के स्वर मुखर नहीं है, वह सभी परिवर्तनों पर दृष्टि रख रहा है, लेकिन अभी वह किसी भी तरह की प्रतिक्रिया देना नहीं चाहता है।

13.4.3 चीनी दृष्टिकोण

रूस के विघटन के बाद साम्यवादी शक्ति का केन्द्र चीन है। चीन सबसे तेजी से उभरती अर्थव्यवस्था है। लेकिन नयी विश्व व्यवस्था को लेकर चीन के विचार अलग हैं, चीन का मानना है कि सोवियत संघ के बिखराव से विश्व में व्यापक परिवर्तन हुआ है। कुछ पुरानी समस्याएँ खत्म हुई है, और नये परिवर्तन हो रहे हैं। पर अमेरिका के प्रभुत्व और एक ध्रुवीय विश्व को चीन अस्वीकार करता है। चीन का मानना है कि हम संक्रमण काल में है। दौड़ अभी समाप्त नहीं हुई है। यूरोप में जातीय संघर्ष, वैश्विक आर्थिक मंदी, अमीर-गरीब देशों के मध्य मतभेद बढ़ रहे

हैं, ऐसे में एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था को स्वीकार करना जोखिम भरा है, दुनिया बहुध्रुवीयकरण की ओर बढ़ रही है। चीन, जापान, यूरोपीय संघ, अमेरिकी प्रभुत्व को चुनौती देने में सक्षम है और चीनी दृष्टिकोण के अनुसार बहुध्रुवीकरण ही विश्व में शक्ति सन्तुलन और शांति ला सकता है। चीन के अनुसार नयी विश्व व्यवस्था में प्रत्येक देश के दूसरे देशों के साथ संबंध पंचशील सिद्धांतों पर आधारित होने चाहिए जिसमें अहस्तक्षेप और सहअस्तित्व सबसे प्रमुख है। सोवियत संघ के विघटन ने चीन को बदलाव करने व दुनिया के लिए अपने बाजार खोलने का दबाव बनाया है। साथ ही संचार माध्यमों के बढ़ते प्रभाव से चीन की आन्तरिक स्थिति भी दुनिया के सामने है। अमेरिका और यूरोप मानवाधिकार के मामले पर भी चीन पर दबाव बनाये हुए है। चीन आन्तरिक बदलावों से भी गुजर रहा है। अतः अभी चीनी हित इसी में है कि यह विकासशील देशों से अच्छे व्यापारिक सम्बन्ध बनाये। विश्व व्यापार संगठन विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष में चीनी हित विकासशील देशों के अनुरूप ही है। अतः उक्त मंचों पर चीन विकासशील देशों का सहयोग करता है। चीन को सबसे बड़ा लेकिन महाशक्ति चीन तेजी से अमेरिकी प्रभुत्व को चुनौती देते उभर रहा है।

13.4.4 यूरोपीय दृष्टिकोण

यूरोपीय संघ के एकीकरण की और बढ़ते कदमों ने उसे और भी शक्तिशाली और प्रभावशाली बनाया है आर्थिक सफलता में यूरोपीय संघ को दृढ़ किया है। यूरोपीय साझा बाजार जो आर्थिक एकीकरण से आरम्भ हुआ था, राजनीतिक एकीकरण की ओर बढ़कर यूरोपीय संघ बन गया है। लेकिन अनेक गुट आज भी विद्यमान है। राष्ट्रवाद और ऐतिहासिक युद्धों ने उन्हें एक होने से रोके रखा है। जर्मनी तेजी से ताकतवर देश के रूप में उभरा है। उससे दूसरे यूरोपीय देश सदैव आंतकित रहते हैं, ब्रिटेन अपने दबदबे को बनाये रखना चाहता है। यूरोप के अन्दर छोटे और कमजोर देश खुद को असुरक्षित समझते हैं और सबसे बड़ी बात सोवियत संघ और साम्यवादी ताकतों से निपटने की है। यूरोपीय देश जो एकता दिखा रहे थे वह कारण भी समाप्त हो गया है, सोवियत संघ के विघटन ने पूँजीवाद को विजयी तो घोषित कर दिया पर इस परिवर्तन से यूरोपीय देशों के बीच मतभेद बढ़ गये हैं। सोवियत संघ के भय ने उन्हें एक कर रखा था, अब उनके मतभेद खुलकर सामने आने लगे हैं। यद्यपि आर्थिक हितों ने यूरोपीय देशों को जोड़ रखा है। नई विश्व व्यवस्था को लेकर कोई स्पष्ट दृष्टि यूरोप के पास नहीं है, क्योंकि यूरोप साझा व्यापार, परमाणु प्रसार, पूर्वी यूरोप उभरे जातीय संघर्ष और आर्थिक मंदी की समस्याओं में उलझा हुआ है। साथ ही अमेरिका के साथ बेहतर सम्बन्धों और वैश्विक समस्याओं के प्रति अमेरिकी दृष्टिकोण के प्रति मौन सहमति ही यूरोपीय दृष्टिकोण है।

13.4.5 विकासशील देशों का दृष्टिकोण

पहले विश्व विचारधारा के आधार पर पूंजीवादी और साम्यवादी देशों में बंटा था, अब आर्थिक आधार पर धनी विकसित व औद्योगिक सम्पन्न और निर्धन, विकासशील, समस्या ग्रस्त दक्षिण में बंट गया है। नयी विश्व व्यवस्था का विकासशील देश विरोध करते हैं, क्योंकि नयी विश्व व्यवस्था आर्थिक विषमता को बढ़ाने में सहायक है। नयी विश्व व्यवस्था में निजीकरण और उदारीकरण का बढ़ता दबाव, विश्व व्यापार संगठन और विश्व बैंक में विकसित देशों का प्रभुत्व सभी विकासशील देशों को और गरीब बनाकर हासिए पर ले जायेगा। यद्यपि कुछ विकासशील देशें आशावादी है। उनका तर्क है, कच्चे माल और खनिज तेलों पर विकासशील देशों का अधिकार हैं, इससे नयी विश्व व्यवस्था में उन्हें लाभ मिलेगा जबकि बहुसंख्यक देश इससे

आसंकित हैं। उनका तर्क है, सोवियत संघ के विघटन से अमेरिका पर दबाव कम हुआ है। फलतः विकासशील देशों को दी जाने वाली सहायता में कमी आयेगी उन्हें ऋण भी कठोर शर्तों पर मिलेंगे/बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के माध्यम से धनी देश उनके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करेंगे। साथ ही उन्हें उदारवादी लोकतंत्र और मुक्त व्यापार के लिये अपने बाजार खोलने पर मजबूर होना पड़ेगा। साथ ही उनके घरेलू उद्योग वैश्विक स्पर्धा में असफल हो जायेंगे और उनकी आसका काफी हद तक सही भी है। वर्तमान में पर्यावरणीय समस्या हो या मानवाधिकार, परमाणु अप्रसार हो या व्यापार के प्रावधान सभी में विकसित देशों के हितों को महत्व मिल रहा है। इसलिए सभी विकासशील देश दक्षिण - दक्षिण सहयोग के मंच जैसे संयुक्त राष्ट्र संघ WTO, G-77 और गुट निरपेक्ष आन्दोलन में एकजुटता की मांग कर रहे है, जिसे वे नयी विश्व व्यवस्था की मांग कहते हैं, जिसमें संयुक्त राष्ट्र संघ की संरचना में बदलाव और WTO के प्रावधानों में बदलाव सबसे महत्वपूर्ण है। यद्यपि विकासशील देशों के पास संख्या बल है, लेकिन उनके राष्ट्रीय हित, आपसी मतभेद और आपसी संघर्ष उन्हें सशक्त विरोध करने योग्य नहीं बनाते हैं। फलस्वरूप बहुसंख्यक वैश्विक संगठन और व्यापार के नियम दक्षिण के गरीब देशों के विरोध में हैं।

13.5 सारांश

सोवियत संघ के विखंडन से द्विध्रुवीय विश्व, अमेरिका की प्रभुता में एक ध्रुवीय हो गया है। विश्व को एक वैश्विक ग्राम बनाने की प्रक्रिया तेज हो गई है। उदारीकरण, निजीकरण और मुक्त व्यापार का बोलबाला है। उदारवादी लोकतंत्र के पक्षधर बढ़ गये है। विश्व व्यापार संगठन का महत्व बढ़ा है। इस नयी विश्व व्यवस्था से अमेरिका प्रसन्न है। वह इसे ही बनाये रखना चाहता है। यूरोपीय संघ, चीन और रूस अपने हितो के प्रति अधिक संवेदनशील है। वही विकासशील देश आसंकित है। यद्यपि यह व्यवस्था अधिक दिनों तक स्थायी नहीं रहेगी क्योंकि विश्व बहुध्रुवीकरण की ओर बढ़ रहा है।

13.6 शब्दावली

एकध्रुवीय - शक्ति का एक ही केन्द्र होना

उदारीकरण - आयात निर्यात के प्रतिबन्ध हटाकर अपनी अर्थव्यवस्था दुनिया के लिए खोलना।

13.7 प्रश्न बोध

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. नयी विश्व व्यवस्था से क्या तात्पर्य है?

   ----

2. नयी विश्व व्यवस्था के संदर्भ में अमेरिकी दृष्टिकोण क्या है?

----

3. नयी विश्व व्यवस्था के संदर्भ में मार्क्सवादी दृष्टिकोण से आप क्या समझते है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. नई विश्व व्यवस्था के संदर्भ में प्रमुख दृष्टिकोणों का वर्णन करते हुए अमेरीकी और यूरोपीय दृष्टिकोण के अंतर को स्पष्ट कीजिए।
2. चीनी दृष्टिकोण व विकासशील देशों के दृष्टिकोण की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. सोवियत संघ कब टूटा?

   (अ) 1979, (ब) 1985 (स) 1989 (द) 1995

2. सोवियत संघ के टूटने से कितने स्वतंत्र राज्य अस्तित्व में आये?

   (अ) 10 (ब) 15 (स) 20 (द) 25

3. उदारवादी दृष्टिकोण में विश्व व्यवस्था है -

   (अ) एक ध्रुवीय (ब) द्वि ध्रुवीय (स) बहुध्रुवीय (द) इनमें से कोई नहीं

   उत्तर - 1-(स), 2-(ब), 3-(अ)

13.8 संदर्भ ग्रंथ

- कुर्भ जेम्स, दि शेप ऑफ दि न्यू वर्ल्ड आईर, 1991
- रोबर्ट्स ऐडमिनिस्ट्रेशन, ए न्यू एवं इन इण्टरनेशनल रिलेशन्स, इंटरनेशनल अफेयर्स 67, 1991, पृ. 509-25
- ओल्सन, विलियम सी और ग्रुम, ए.जे.आर.ए इण्टरनेशनल रिलेशन्स देन एण्ड नाउ ओरिजिन्स एण्ड ट्रेण्ड्स इन इंटरप्रेटेसन्स, हार्पर कोलिन्स एकेडेमिक लंदन, 1991

इकाई-14

उत्तर दक्षिण दृष्टिकोण संवाद

इकाई की संरचना

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 उत्तर एवं दक्षिण संवाद से तात्पर्य

14.3 उत्तर-दक्षिण संवाद : प्रमुख मुद्दे

14.4 उत्तर-दक्षिण संवाद के संदर्भ में किये गये प्रमुख प्रयास

14.5 मूल्यांकन

14.6 सारांश

14.7 शब्दावली

14.8 बोध प्रश्न

14.9 संदर्भ ग्रंथ

14.1 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत हम उत्तर-दक्षिण संवाद पर चर्चा की गयी है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में उत्तर दक्षिण संवाद एवं दक्षिण-दक्षिण सहयोग की आवश्यकता पर चर्चा होती रहती है। वैश्वीकरण, उदारीकरण और बाजारीकरण ने दुनिया के अमीर व गरीब देशों के मध्य खाई को चौड़ा कर दिया है। इस इकाई का उद्देश्य -

1. उत्तर और दक्षिण संवाद के अभिप्राय को समझाना है।
2. उत्तर और दक्षिण के संवाद का महत्व और प्रयासों की जानकारी देना है।
3. दक्षिण-दक्षिण सहयोग पर प्रकाश डालना है।

14.1 प्रस्तावना

उत्तरी देशों में यूरोप और अमेरिका के धनी देश आते है। दक्षिण में सैकड़ो वर्षों तक गुलाम रहे, एशिया अफ्रीका के देश आते है। उत्तर और दक्षिण के देशों में अत्यधिक असमानता है। दक्षिण अपनी दुर्दशा के लिए उत्तर की औपनिवेशिक शक्तियों को जिम्मेदार मानकर उनसे प्राप्त मदद को उनकी नैतिक जिम्मेदारी मानता है। दक्षिण के विकासशील देश न सिर्फ अपने विकास के लिए उत्तर पर निर्भर है, बल्कि उनसे लिए गये ऋण और उसके ब्याज के चक्रव्यूह में फंस गये हैं। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और आयात-निर्यात के नियम भी उत्तर के पक्ष में है। अतः

बहुसंरक्षक दक्षिण के देश बदलाव चाहते हैं, जबकि उत्तर के देश अपनी अनुकूल विश्व व्यवस्था को बनाये रखना चाहते हैं। इसी मतभेद के चलते उत्तर और दक्षिण के मध्य संवाद महत्वपूर्ण हो गया है, इसी के परिप्रेक्ष्य में दक्षिण-दक्षिण संवाद या सहयोग भी आवश्यक है।

14.2 उत्तर-दक्षिण संवाद से तात्पर्य

दुनिया को भौगोलिक दृष्टि से दो भागों में बांटा गया है। काल्पनिक भूमध्य रेखा पृथ्वी को उत्तरी गोलार्द्ध एवं दक्षिण गोलार्द्ध में बांटती है, लेकिन राजनीतिक क्षेत्र में उत्तर का अर्थ उत्तरी गोलार्द्ध नहीं है और दक्षिण का अर्थ सिर्फ दक्षिण गोलार्द्ध नहीं है।

उत्तर से अभिप्राय : यूरोप और अमेरिका के देश धनी औद्योगिक, विकसित पूंजीवादी देशों में है, जो सैकड़ो वर्षों से दक्षिण के देशों के औपनिवेशिक सम्प्रभु थे। इन्होनें एशिया और अफ्रीका के देशों पर लम्बे समय से शासन कर उनका शोषण किया और उनके कच्चे माल के बल पर अपने औद्योगिक साम्राज्य खड़े किये। फलस्वरूप उत्तर धनी, सम्पन्न विकसित है। उत्तर में विश्व की 26.4 प्रतिशत जनसंख्या है, जिनके पास पृथ्वी के 78.5 प्रतिशत संसाधन है। यहां प्रतिव्यक्ति आय 10 हजार डॉलर से अधिक है। यहां अमीरी, शिक्षा, स्वास्थ्य, उच्च जीवन स्तर ठंडी जलवायु, जनसंख्या का कम घनत्व, सम्पन्नता, ऐश्वर्य और विकास के समस्त श्रेष्ठतम साधन उपलब्ध हैं। उत्तर के अंतर्गत संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन फ्रांस, जर्मनी, कनाडा, जापान आदि सम्पन्न देश आते हैं। इसी धनी, समृद्ध और पूंजीवादी देशों को उत्तर कहा जाता है।

दक्षिण से अभिप्राय : उत्तर को समझने के पश्चात् दक्षिण को समझना आसान है। दक्षिण में एशिया, अफ्रीका के वे देश आते है, जो लम्बे समय तक गुलाम रहे। जहाँ गर्म जलवायु अत्यक्षिक जनसंख्या का दबाव, गरीबी, अशिक्षा, भुखमरी, कुशोषण, अल्पविकास, निम्न जीवन स्तर, कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् आजाद हुए इन देशों को तीसरी दुनिया के देश भी कहा जाता है। यहां जनसंख्या को 73.6 प्रतिशत निवास करता है, पर विश्व के कुल 21.5 प्रतिशत संसाधन इनके पास है। यहां साफ पानी भी सबसे दुर्लभ है। सैकड़ों साल की गुलामी, संसाधनों के दोहन और शोषण ने इन देशों को गरीब, कर्ज में डुबे, समस्या ग्रस्त देश बना दिया है। अपनी समस्याओं को ये देश अपनिवेशिक शोषण का परिणाम मानते हैं। इन्हीं देशों को दक्षिण कहा जाता है।

इस प्रकार उत्तर और दक्षिण में अत्यधिक विषमता है। इसी असमानता और मतभेदों के दूर करने के लिए उत्तर और दक्षिण को एकमच पर आकर परस्पर बातचीत और सहयोग करने को उत्तर दक्षिण संवाद कहते हैं।

14.3 उत्तर दक्षिण संवाद : प्रमुख मुद्दे

1. **नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की मांग** : 1 मई 1974 को संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने छठवें विशेष सत्र में नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था हेतु एक घोषणा जारी किया। यह व्यवस्था समानता, आत्मनिर्भरता और आपसी सहयोग पर आधारित होगी। दक्षिण के एफो-एशियाई देशों की यहाँ मांग थी। 1960 के दशक तक बहुसंख्यक दक्षिण के देश आजाद हो चुके थे। लेकिन सभी गरीबी और समस्याओं में जकड़े थे। गुटनिपेक्ष देशों ने पहली बार ''आर्थिक विकास की समस्याओं पर सम्मेलन'' 1962 में काहिरा में आयोजित किया था। सभी विकासशील देश इस बात से सहमत थे कि विश्व व्यवस्था

व्यापार के सभी नियम विकसित देशों के पक्ष में है, विकासशील देशों में 75 जनसंख्या जो विश्व की आय का मात्र 30 प्रतिशत प्राप्त करती है। इनमें 80 करोड़ निरक्षर एक अरब भयानक कुपोषण के शिकार है। अमीर व विकसित देश ऋण पर ब्याज और व्यापार के सभी नियम अपने पक्ष में करके लगातार उनका शोषण कर रहे हैं। 1973 में अल्जीयर्स में चौथें गुटनिरपेक्ष आन्दोलन में नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की मांग और पकड़ती गई और 1974 में संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने निम्न तीन ऐतिहासिक कदम उठाये -

अ. नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था हेतु घोषणा

ब. नई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था हेतु कार्यवाही या कार्यक्रम

स. राज्यों के आर्थिक अधिकार और कर्तव्यों को चार्टर।

उक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतू उत्तर और दक्षिण में संवाद आवश्यक हो गया।

2. **संयुक्त राष्ट्र संघ के पुर्नगठन की मांग** : संयुक्त राष्ट्र के पुर्नगठन की मांग दक्षिण के देश लम्बे समय से कर रहे हैं, क्योंकि

   1. वर्तमान में सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों के वीटो पावर ने विकसित देशों को महाशक्ति बना दिया है। जब 51 देश थे तब सुरक्षा परिषद में 4 स्थायी सदस्य थे, पांचवा चीन इसमें शामिल हुआ, किन्तु अब 194 सदस्य होने पर भी सुरक्षा परिषद में 5 स्थायी और 10 अस्थायी सदस्य है, दक्षिण के देश चाहते हैं, उन्हें प्रतिनिधित्व देकर सुरक्षा परिषद की संख्या 25 बढ़ाकर कर दी जाये।

   2. महासभा की शक्तियां बढ़ाई जाए क्योंकि वहां दक्षिण के देशों का संस्था बल अधिक हैं।

   3. आर्थिक सामाजिक परिषद के स्थान पर 23 सदस्यीय आर्थिक परिषद और 23 सदस्यीय सामाजिक परिषद का गठन होना चाहिए।

   4. विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को संयुक्त राष्ट्र संघ के अधीन लाया जाए।

3. **WTO के प्रावधानों में बदलाव की मांग** : दक्षिण के देशों का तर्क है कि विश्व व्यापार संगठन के नियम उत्तर अर्थात विकसित देशों के पक्ष में हैं जैसे

   1. बौद्धिक सम्पदा अधिनियम के अंतर्गत प्रत्येक अविष्कार का WTO में पेन्टेट कराया जा सकता है, और उस अविष्कार का विश्व भर में प्रयोग होने पर एक निश्चित कमीशन की धनराशि देश के पेन्टेट कर्ता को प्राप्त होता रहेगा। जैसे एक जर्मन वैज्ञानिक के कैन्सर की दवाई बनाई और उसने अपने नाम पेन्टेट करा लिया। पेटेन्ट कराने लेने के बाद दुनिया में जब भी उस दवाई का निर्माण होगा और क्रय-विक्रय से जो आमदनी होगी उसकी एक निश्चित धनराशि जर्मनी को मिलता रहेगा। WTO में पेन्टेट कर्ता देशों में अमेरिका, जापान, जर्मनी जैसे उत्तर के देश दबलाव चाहते है उक्त व्यवस्था से उत्तर के देश सदैव धनी बने रहेंगे।

   2. व्यापार के अन्तर्राष्ट्रीय मानक : दक्षिण के ज्यादातर देश कृषि प्रधान है। दक्षिण के देश इसमें उनका कृषि उत्पादन विश्व में तभी निर्यात किया जा सकता है, जब

वह अन्तर्राष्ट्रीय मानक के अनुरूप हो। उत्तर के औद्योगिक देशों के पास एयर कन्डीशन भडांरण और उच्च स्तरीय पैकिंग की सुविधा है, जिससे खाद्य पदार्थ सुरक्षित रहते हैं। दक्षिण के पास अक्त सुविधाऐं नहीं है अतः उत्तर के देश दक्षिणी देशों के उत्पादों को अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप नहीं मानते जिससे दक्षिण के देशों को आर्थिक नुकसान होता है।

3. अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में प्रतिस्पर्धा : WTO के नियम सभी के लिए समान है, लेकिन दक्षिण के गरीब देशों के घरेलू उद्योग उच्च तकनीक और मशीनो के अभाव में उत्तर के उत्पादों से प्रतिस्पर्धा करने में समक्ष नहीं है। अतः उक्त प्रावधान के विरोध में WTO के विभिन्न सम्मेलन उत्तर-दक्षिण संवाद के मंच बन जाते हैं।

4. आर्थिक विकास हेतू सहायता : दक्षिण के देश आजाद होने के बाद विकास हेतु उत्तर के देशों पर ही निर्भर रहे हैं। उत्तर के देश अपने राष्ट्रीय हितो को छोड़े बिना, उदारवादी पूँजीवाद के आधार पर सहायता करने आगे आते है, और निर्धन देशों को ऋण और आर्थिक मदद देकर आर्थिक साम्राज्यवाद का शिकार बना लेते हैं। दक्षिण के देशों का तर्क है कि उनकी आर्थिक दुर्दशा की मूल जड़ उत्तर के देशों का औपनिवेशिक शोषण है। अतः उत्तर के देशों का नैतिक कर्त्तव्य है कि वे दक्षिण के देशें को आर्थिक विकास हेतु सहायता करे।

5. ऋण भार में वृद्धि : दक्षिण के देशों के असंतोष का प्रमुख कारण है, उनके ऋण भार में हो रही बेतहासा वृद्धि। इसने उनके विकास को कुंठित कर दिया है। उदाहरण के रूप में 1973 में गैर तेल निर्यातक देशों का ऋणात्मक भुगतान 900 करोड़ डॉलर बाकी था, जो मात्र दो वर्षों 1975 में बढ़कर 3500 करोड़ डॉलर हो गया। 1984 की विश्व बैंक रिपार्ट में भी दक्षिण के बढ़ते ऋण भार पर चिंता जताई गयी थी, क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोश व अन्य वित्तीय संस्थान जितना ऋण देते है, उससे कई गुना अधिक ब्याज बसूलते हैं। अतः दक्षिण के देशों की मांग है, कि अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संगठनों के प्रावधानों में परिवर्तन होना चाहिए, जिससे दक्षिण के देशों की ऋणभार से राहत मिल सके। साथ ही 'ब्रिटेन वुड़स' आधारित विश्व की मौद्रिक नीति भी दक्षिण के देशों के प्रतिकूल है। डॉलर का बढ़ता मूल्य और दक्षिण के देशों की मुद्रा अवमूल्यन ने भी ऋणभार में वृद्धि की है, जिससे दक्षिण के देशों ने 'ब्रिटेन वुड्स' व्यवस्था पर भी पुर्नविचार की मांग की है।

6. पर्यावरणीय मुद्‌देः तेजी से पृथ्वी के बढ़ते तापमान और ओजोन परत के क्षतिग्रस्त होने के बाद विश्व का ध्यान पर्यावरण संरक्षण पर गया तेजी से होते औद्योगिकीकरण और प्राकृतिक संसाधनों के दोहन ने विश्व को चिन्ता में डाल दिया है। फलस्वरूप सतत् विकास की पर्यावरण अनुकूल अवधारणा पर जोर दिया जाने लगा। इस संदर्भ में मुख्य बिन्दुओं को लेकर मदभेद है -

अ. ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जनः उत्तर के देश पर्यावरण के लिए घातक मिथेन और कार्बनडाइआक्साइड पर 20 प्रतिशत कटौती चाहते थे पर दक्षिण के देशों का आरोप है कि उत्तर ही घातक गैसो के उत्सर्जन का जिम्मेदार है। अतः उत्तर को अधिक कटौती करनी चाहिए।

ब. वनों का प्रश्नः उत्तर के देश विकास के नाम पर अपने ज्यादातर जंगल काट चुके है, और अब दक्षिण देशों में स्थित जंगलों को न काटने की सलाह दे रहे हैं। दक्षिण इसके लिए तैयार नहीं है।

स. जनसंख्याः उत्तर के देश प्रदूषण हेतु दक्षिण देशों की बढ़ती जनसंख्या को जिम्मेदार मानते हैं दक्षिण के देशों का आरोप है कि 30 प्रतिशत जनसंख्या जो उत्तर में निवास करती है वह 70 प्रतिशत संसाधनों का उपभोग करती है, जो अन्यायपूर्ण है।

द. वित्तीय मददः पर्यावरण संरक्षण के लिए वित्तीय कोष चाहिए। दक्षिण के देश अधिक आर्थिक मदद देने में सक्षम नहीं है। वहीं उत्तर के देश वित्तीय मदद देना नहीं चाहते। इस मुद्दे पर भी मदभेद बना हुआ है।

14.4 उत्तर-दक्षिण संवाद के संदर्भ में किये गये प्रमुख प्रयास

उत्तर-दक्षिण के मध्य विद्यमान मदभेदों को दूर करने हेतु संवाद के प्रयासों में निम्नलिखित मुख्य हैं -

1. **पेरिस सम्मेलन (1975-77)** : अमेरिका की पहल पर पेरिस में एक शिखर सम्मेलन बुलाया गया जिसे अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग सम्मेलन नाम दिया गया। इसमें 8 विकसित और 16 विकासशील देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इसमें अमेरिका ने दक्षिण देशों के लिए कुछ रियायत, सहायता कार्यक्रमों की घोषणा भी की। दक्षिण के गरीब देशों के लिए एक विशेष कोष भी बनने की घोषणा हुई लेकिन बदले में विकसित देश तेल निर्यातक देशों से स्थिर मूल्यों पर तेल की सप्लाई चाहते थे जो बड़ी कीमत थी, जिसे तेल निर्यातक देशों ने अस्वीकार कर दिया बाद में यह सम्मेलन असफल हो गया।

2. **ब्रांट आयोग 1977 :** विश्व बैंक के अध्ययन मैकनाभारा ने अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक मुददों के समाधान के लिए एक निष्पक्ष व स्वतंत्र आयोग बनाने का सुझाव रखा। उनके सुझाव पर यह आयोग अस्तित्व में आया। इस आयोग के अध्यक्ष विली ब्रान्ट थे। अतः इसे ब्रांट आयोग कहा जाता है। इस आयोग में भौगोलिक आधार पर विश्व के सभी हिस्से से प्रतिनिधि चुने गये। आयोग की रिपोर्ट में कहा गया कि विश्व के विकास के लिए उत्तर और दक्षिण की पारस्परिक निर्भरता आवश्यक है। इस हेतु आयोग ने निम्न सुझाव दिये -

   1. वस्तु व्यापार पर प्रावधान, 2. विकासशील देशों के लिए विदेशी कर्ज, 3. अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा सुधार, 4. तकनीकी हस्तान्तरण, 5. समुद्री कानून, 6. बहुउद्देशीय व्यापार, 7. बहुराष्ट्रीय कम्पनियां एवं निगम

3. **कानकुन सम्मेलन 1981 :** मैक्सिको के कानकुन में आयोजित इस सम्मेलन में 22 देशों ने भाग लिया इसका उद्देश्य भी उत्तर-दक्षिण संवाद द्वारा निम्न बिन्दुओं पर विचार किया गया।

   1. व्यापार के अनुकूल वातावरण बनाना।
   2. आयात-निर्यात की बाधाओं को कम करना।
   3. अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की संरचना में परिवर्तन।

उक्त तीन बिन्दुओं के अतिरिक्त भारत ने भी पाँच सूत्रीय योजना रखी जो सम्मेलन में रखी तो गई पर उसे विकसित देशों ने अधिक महत्व नहीं दिया। कानकुन में भी विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष पर उत्तर के वर्चस्व को लेकर तीखी बहस हुई पर परिणाम निराशाजनक ही रहे।

4. **उरूग्वे वार्ता (गैट एवं विश्व व्यापार संगठन) 1986-93 :** जैसा कि विदित है 1947 में गैट (GATT-General Argument on Tariffs and Trade) तटकर और व्यापार पर सामान्य समझौते के रूप में अस्तित्व में आया था। गैट का आठवां सम्मेलन उरूग्वे में 1986 में आयोजित किया गया जिसमें लगभग 100 देशों ने भाग लिया। चार वर्षों के प्रयास के बाद वार्ता सूचीं में निम्न चार क्षेत्र सम्मिलित किये गये -

   1. व्यापार से सम्बन्धित निवेश के उपाय (TRIMS)
   2. बौद्धिक सम्पदा अधिकार से संबंधित व्यापार (TRIPS)
   3. सेवा क्षेत्र में व्यापार तथा
   4. कृषि।

डंकल प्रस्ताव : लम्बे वाद-विवाद के बाद भी उक्त चार क्षेत्रों में सहमति न बन पाने से गैट के महानिदेशक आर्थर डंकल ने एक 500 पृष्ठ का प्रस्ताव रखा जिसे डंकल प्रस्तवा के नाम से जाना जाता है। इस प्रस्ताव का दक्षिण के देशों के काफी विरोध किया। क्योंकि इसमें पेटेन्ट के नियम उत्तर के निजी देशों के पक्ष में थे। दक्षिण के गरीब देशों को कृषि तकनीकी खरीदने के लिए भारी कीमत चुकायी पड़ती। इसके विरोध के बावजूद भी गैट के नियम उत्तर के पक्ष में ही बने रहे।

विश्व व्यापार संगठन : 1995 में WTO की स्थापना की गई। आगे इकाई 17 में इसकी विस्तृत जानकारी दी गई है। WTO का प्रति दो वर्ष में सम्मेलन होता है। WTO उत्तर दक्षिण संवाद का प्रमुख मंच बन गया।

5. **पृथ्वी सम्मेलन जून 1992-97 :** ब्राजील में रियों डी जेनेरा में "पृथ्वी के बिगड़ते पर्यावरण संतुलन से चिन्तित उत्तर और दक्षिण के देश इस सम्मेलन में पहुंचे। विकसित देशों का तर्क था कि दक्षिण की बढ़ती जनसंख्या पर्यावरण असंतुलन के लिए जिम्मेदार है। इसके विपरीत दक्षिण के देशों का तर्क थी कि औद्योगिकीकरण तथा प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से पर्यावरण असंतुलित हुआ है और इसके लिए उत्तर के देश जिम्मेदार हैं। इस सम्मेलन के प्रमुख मुद्दों पर इसी अध्याय में पूर्व में चर्चा की गई है। इसमें सतत् विकास, पर्यावरण अनुकूल प्रौद्योगिकी, विशेली गैसों के उत्सर्जन, वन संरक्षण, जैविक विविधता आदि जैसे मुद्दे सम्मिलित हैं। इस सम्मेलन ने पर्यावरण संरक्षण को महत्वपूर्ण वैश्विक मुद्दा बनाने में सफलता प्राप्त की। इनमें तीन दस्तावेजों पर हस्ताक्षर भी किये गये, ये थे 1. एजेन्डा 21वीं सदी लिए विकास तथा पर्यावरण सुधार योजना, 2. 27 सूत्रीय रियो घोषणा पत्र 3. विश्व के वनों के संरक्षण संबंधी वक्तव्य।

1993 से विश्व जैव विविधता संधि प्रभावी हो गई है। अमेरिका ने इस संधि पर हस्ताक्षर नहीं किये है। पर्यावरण संरक्षण हेतु आर्थिक अशंदान को लेकर भी अमेरिका का रवैया निराशाजनक रहा है। जापान ने सकारात्मक पहल की है। उसने पाँच वर्षों में 1 अरब डॉलर प्रतिवर्ष देने का वचन दिया है। रियो डी जेनरों के 1992 के प्रथम पृथ्वी सम्मेलन और जून 1997 को न्यूयॉर्क में हुए पृथ्वी सम्मेलन से यह बात स्पष्ट हो गयी कि पर्यावरण संरक्षण हेतु आर्थिक

भार उठाने के लिए देश तत्पर नहीं है। सर्वादिक ग्रीन गैस उत्सर्जन अमेरिका द्वारा होता है। अतः विशैली गैसो को वायुमंडल में छोड़ने पर कटौती करने का सुझाव दिया गया, जिसे अमेरिका ने अस्वीकार कर दिया। साथ ही वन अन्तर्राष्ट्रीय सम्पदा न होकर राष्ट्रीय सम्पदा ही रहेंगे ऐसा दक्षिण देशों के प्रतिरोध से संभव हुआ। कुल मिलाकर पर्यावरणीय मुद्दों पर उत्तर व दक्षिण में पर्याप्त मतभेद है, जिस पर सहमति हो पाना भविष्य में भी चुनौती पूर्ण है।

6. **जी-8 की बैठक (एवियान, फ्रांस)**:- जी-8 जो दुनिया के सर्वाधिक धनी देशों का प्रभावशाली संगठन है, इसका शिखर सम्मेलन जून 2003 को आयोजित किया गया। फ्रांस ने नई पहल करके 10 विकासशील देशों को आमन्त्रित किया जिनमें भारत भी था। चूंकि इसमें विकसित व विकासशील देश दोनों थे। अतः इस सम्मेलन में उत्तर-दक्षिण सहयोग हेतु सर्वसहमति बनाने पर जोर दिया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ में विचारों की भिन्नता और WTO में भी राष्ट्रीय हित हावी रहने से व उत्तर-दक्षिण संवाद के प्रभावशाली मंच नहीं बन पर रहे है, अंतः कृषि के विकास, निर्वाध पूँजी प्रवाह आदि पर सहयोग एवं चर्चा हुई और सम्मेलन सकारात्मक वातावरण में सम्पन्न हुआ।

7. **जी-20** : फ्रांस में हुई जी-8 की बैठक (1999) में उत्तर-दक्षिण मंच की तलाश में एक नये संगठन ने आकार लिया। इसे जी-20 का नाम दिया गया। इसमें 19 देशों के साथ यूरोपीय संघ की अध्यक्षता कर रहे देश को भी सम्मिलित किया जाता है, इस प्रकार इसे जी-20 कहा जाता है। इन 20 देशों को 5 के समूह में निम्नानुसार बांटा गया है -

जी-20 के सदस्य देश

समूह 1 - आस्ट्रेलिया, कनाडा, सउदी अरब, संयुक्त राज्य अमेरिका
समूह 2 - भारत, रूस, साउथ अफ्रीका, टर्की
समूह 3 - अर्जेन्टाइना, ब्राजील, मैक्सिको, यूरोपीय संघ के अध्यक्ष देश
समूह 4 - फ्रांस, जर्मनी, इटली, ग्रेट ब्रिटेन
समूह 5 - चीन, इंडोनेशिया, जापान, साउथ कोरिया

जी-20 की अध्यक्षतास समूह अनुसार उस देश को दी जाती है, जहां इसका शिखर सम्मेलन होता है। जी-20 की वार्षिक बैठक होती है। किन्तु 2009, 2010 में वर्ष में दो बार बैठक की गई थी। 1999 से इसके विदेश मंत्रियों की बैठक सर्वप्रथम बर्लिन में 1999 में, दूसरा सम्मेलन मौण्ट्रिलय 2000 में, तीसरा ओटावा 2001, चौथा नई दिल्ली 2002, एवं मैक्सिको सिटी में 2003 में आयोजित हुआ।

जी-20 के प्रमुख उद्देश्य

1. उत्तर-दक्षिण संवाद हेतु सशक्त मंच तैयार करना।
2. वैश्विक आर्थिक मंदी से उबरने हेतु पारस्परिक सहयोग।
3. राजकोषीय घाटा कम करने व जी.डी.पी. बढ़ाने हेतु प्रयास।
4. सतत् विकास (Sustainable Development) हेतु अनुकूल प्रौद्योगिकी का प्रयोग।
5. रोजगार के अवसर बढ़ाने व टिकाउ संतुलित वृद्धि दर प्राप्त करने हेतू प्रयास।
6. पारस्परिक सहयोग एवं आत्मनिर्भरता पर बल।
7. मैद्रिक संकट से निपटने हेतु स्थायी प्रावधान।

जी-20 में सदस्य देशों के अलावा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक के प्रतिनिधि भी भाग लेते हैं। अतः जी-20 के आठवें शिखर सम्मेलन (सितम्बर 2013) में जो रूस के सेंट पीटरबर्ग में आयोजित था, भारत के प्रधानमंत्री श्री मनमोहन सिंह ने इसे विश्व की अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने में सक्षम बताया। यद्यपि जी-20 के आठ शिखर सम्मेलन हो चुके है। इसमें विश्व की अर्थव्यवस्था के सतत और टिकाउ विकास हेतु ढांचागत सुधार करने, मौद्रिक संकटो से निपटने व व्यापार के नये क्षेत्र खोजने पर बल दिया गया इस प्रकार जी-20 को उत्तर-दक्षिण संवाद के प्रभावी मंच के रूप में देखा जा रहा है।

2009 में डेनमार्क की राजधानी कोपनहेगन में दुनिया के 192 देशों के प्रतिनिधि आये जिनकी चिंता पृथ्वी पर हो रहे जलवायु परिवर्तनों एवं प्रदूषण कारी गैसो के उत्सर्जन को लेकर थी। इस सम्मेलन में कई दिनों तक चर्चा चली। इसके बावजूद भी सर्वसहमति नहीं बन पाई। पूर्व में हुए क्योटो सम्मेलन में विकसित देशों हेतु गैस उत्सर्जन की सीमा निर्धारित की गई थी, विकासशील देश इससे आजाद थे। कोपनहेगन में अमेरिका ने विकासशील देशों हेतु भी इस प्रतिबंध की मांग की जिसका भारत ने विरोध किया। अंततः एक गैर बाध्यकारी कोपेनहेगन समझौते पर हस्ताक्षर किये गये जो अमेरिकी दबाव का नतीजा था। भारत ने इसका विरोध किया और पर्यावरण संतुलन हेतु इसे घातक करार दिया।

14.5 मूल्यांकन

उत्तर-उत्तर संवाद की प्रक्रिया विगत दशकों से जारी है, लेकिन परिणाम बहुत आशाजनक नहीं रहे हैं। उत्तर और दक्षिण के मध्य सहयोग और सहमति के मार्ग में अनेक प्रमुख बाधाए हैं। जैसे - प्रथम, धनी देश अपने विकास में विकासशील देशों के महती भूमिका को अस्वीकार करते हैं, जबकि उनके उपनिवेश रहे दक्षिण के देशों के कच्चे माल से ही उत्तर के देश विकास के शिखर पर पहुंचे हैं। **दूसरे,** विकसित देश तरह अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक और विश्व व्यापार संगठन पर अपने वर्चस्व को कम नहीं करना चाहते हैं। **तीसरे,** दक्षिण के देश अपने शोषण के लिए उत्तर को जिम्मेदार मानते हैं, और उनका तार्किक उत्तर के देशों का नैतिक दायित्व है कि उनके आर्थिक विकास में सहायता करें। **चौथे,** पर्यावरणीय मुददों पर भी उत्तर के अड़ियल रवैये के कारण दक्षिण के देशों के असंतोष को बढ़ा दिया है। उत्तर के देश न पर्यावरण संरक्षण हेतु मदद करना चाहते हैं, और न ही विषैली गैसो के उत्सर्जन में कटौती करना चाहते हैं। **पांचवा,** सबसे महत्वपूर्ण बात दक्षिण के देशों में विकासशील में एकजुटता नहीं है। उनमें आपस में मतभेद और विवाद के पर्याप्त कारण है, जिससे वे सशक्त होकर अपनी बात उत्तर से मनवा नहीं पाते बल्कि गैट या विश्व व्यापार संगठन के प्रावधानों पर हस्ताक्षर करने को विवश हो जाते है। इस प्रकार हम कह सकते हैं, बिना दक्षिण की एकजुटता के उत्तर-दक्षिण संवाद के प्रभावी परिणाम मिलना कठिन है, क्योंकि उत्तर और दक्षिण के हित परस्पर विरोधी हैं।

14.6 सारांश

उत्तर दुनिया के धनी विकसित पूंजीवादी देशों को कहा जाता है, जबकि दक्षिण से तात्पर्य लम्बे समय तक उपनिवेश रहे बड़ी जनसंख्या और विकट समस्याओं वाले विकासशील, अविकसित देशों से है। उत्तर और दक्षिण में पर्याप्त विषमता है। उत्तर समृद्ध, विकसित, सुविधा सम्पन्न है, तो दक्षिण गरीब, विकासशील, समस्याग्रस्त है। ऐसे में उत्तर के देश अपने प्रभुत्व को बनाये रखना, दक्षिण के बाजारों का उपयोग करना और अपने राष्ट्रीय हितों को बचाऐं रखना

चाहते हैं। इसके विपरीत दक्षिण के देश नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की मांग के अन्तर्गत संयुक्त राष्ट्र संघ, विश्व व्यापार संगठन और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की संरचना में बदलाव, विकास में सहायता और विज्ञान, तकनीक और श्रम के निर्वाध प्रवाह को सुनिश्चित करना चाहते हैं। उत्तर और दक्षिण के इन्हीं मत भेदों को दूर करने के लिये गये प्रयासों को ही उत्तर-दक्षिण संवाद कहते हैं।

14.7 शब्दावली

जी-20; विकसित व विकासशील देशों का समूह है।

उत्तर - विकसित पूंजीवादी देश

दक्षिण - विकासशील या तीसरी दुनिया के देश

पृथ्वी सम्मेलन - पर्यावरण संरक्षण हेतु किये गये वैश्विक सम्मेलन।

उत्तर-दक्षिण संवाद

14.8 बोध प्रश्न

1. उत्तर दक्षिण संवाद से क्या अभिप्राय हैं?

-- ---------------------------
-- ---------- ------ ------ ---

2. उत्तर दक्षिण के मध्य प्रमुख मुद्दे कौन से हैं?

-- ---------------------------
-- ---------- ------ ------ ---

3. जी-20 से आप क्या समझते हैं?

-- ---------------------------
-- ---------- ------ ------ ---

4. पर्यावरण को लेकर उत्तर-दक्षिण विवाद के क्या कारण हैं?

-- ---------------------------
------------ ------ ------ ---

इकाई-15

विश्व व्यवस्था का बहुध्रुवीयकरण

इकाई की संरचना

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 बहुध्रुवीय करण हेतु उत्तरदायी कारक

- 15.2.1 सोवियत ब्लॉक का कमजोर होना
- 15.2.2 सोवियत संघ तथा चीन के बीच विचारधारा सम्बन्धी विरोध
- 15.2.3 पूर्वी यूरोप में मुक्ति लहर
- 15.2.4 अमेरिकी ब्लॉक का कमजोर होना
- 15.2.5 फ्रांसीसी नीतियाँ
- 15.2.6 लैटिन अमेरिका में राष्ट्रवाद का मजबूत होना
- 15.2.7 गुटनिरपेक्षता तथा तीसरे विश्व का उदय
- 15.2.8 परमाणु क्लब का विस्तार
- 15.2.9 नये राज्यों का प्रादुर्भाव
- 15.2.10 पश्चिमी यूरोप का आर्थिक एकीकरण
- 15.2.11 मुख्य आर्थिक शक्तियों के रूप में जापान तथा पश्चिमी जर्मनी का उदय

15.3 निष्कर्ष

15.4 संदर्भ ग्रंथ

15.5 सम्बन्धित प्रश्न

- 15.5.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न
- 15.5.2 लघु उत्तरीय प्रश्न
- 15.5.3 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

15.0 उद्देश्य

इस इकाई में द्विध्रुवीय विश्व व्यवस्था की अवधारणा में स्थान पर बहुध्रुवीयकरण की प्रक्रिया के अस्तित्व में आने के तथ्यों पर विचार–विमर्श किया गया। इस इकाई का उद्देश्य है–

1. विश्व व्यवस्था में बहुध्रुवीय करण की प्रक्रिया को समझना
2. विश्व व्यवस्था में बहु–ध्रुवीय करण की प्रक्रिया को जन्म देने वाले कारक तत्वों पर प्रकाश डालना
3. बहु–ध्रुवीय करण की प्रक्रिया के प्रकाश में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की प्रकृति को समझना।

15.1 प्रस्तावना

शीत युद्ध के काल में सम्पूर्ण विश्व दो परस्पर विरोधी गुटों में विभाजित हो गया था, जिसमें एक तरफ अमेरिका एवं उसके समर्थित राष्ट्र थे वहीं दूसरी ओर सोवियत संघ तथा साम्यवादी विचार धारा को समर्थन देने वाले राष्ट्र थे। इस दो ध्रुवीय व्यवस्था ने सम्पूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की व्यवस्था को प्रभावित किया। संघर्ष द्वेष एवं प्रतिस्पर्धा के लम्बे काल का अन्त शीत युद्ध की समाप्ति से हुआ तत्पश्चात् नयी अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था का प्रार्दुभाव हुआ, एक ऐसी व्यवस्था जिसमें शक्तियां किसी एक ध्रुव या राष्ट्र में केन्द्रित नहीं थीं बल्कि यह शक्तियां सन्तुलित रूप से विभाजित थीं।

बहु–ध्रुवीकरण का अर्थ है अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में कई शक्ति केन्द्रों का अस्तित्व। वासबी के शब्दों में, ''बहु ध्रुवीय व्यवस्था में बहुत से बड़े तथा सामान्य रूप में एक जैसी शक्ति या क्षमता वाले कम से कम पांच राज्य शामिल होते है''। बहु–ध्रुवीकरण में महत्वपूर्ण कार्यकर्ताओं (राज्यों) का नियन्त्रित व्यवहार होता है। द्वि–ध्रुवीकरण के साधारण तथा कठोर विभाजन की तुलना में बहु–ध्रुवीकरण में शक्ति का ढांचा जटिल तथा लचीला होता है। इसमें शत्रुओं तथा मित्रों के बीच कोई स्थायी रूप से कठोर बंटवारा नहीं किया जा सकता। प्रत्येक ध्रुव दूसरे सभी कार्यकर्ताओं को सम्भावित शत्रु या सम्भावित मित्र मानता है। महाशक्तियों की अधिक संख्या होने के कारण कोई भी राज्य अपने आपकों किसी भी एक महाशक्ति के साथ भी जोड़ सकता है। बहुत सी अल्पकालीन तथा अन्तरिम सन्धियां समय–समय पर की जाती है। विरोधों को अधिक गहन नहीं होने दिया जाता। प्रतिद्वन्द्वी तथा विरोधियों के बीच वैर भाव द्वि–ध्रुवीकरण में पाये जाने वाले वैर भाव से कम होता है।

बहु–ध्रुवीकरण में क्योंकि शक्तिशाली राज्यों की संख्या अधिक होती है किसी भी एक कार्यकर्ता पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता ।

1955 के बाद द्वि–ध्रुवीकरण का बहु–ध्रुवीकरण में रूपान्तरणः— दूसरे विश्वयुद्ध के पश्चात् जो द्वि–ध्रुवीकरण स्थापित हुआ जो पाँचवे दशक में कठोर द्वि–ध्रुवीकरण बन गया था, वह 10 वर्षों तक चलता रहा। पाँचवे दशक के अन्त में लचीली द्वि–ध्रुवीय व्यवस्था के रूपान्तरण की ओर विभिन्न प्रवृतियां उभरने लगीं। पाँचवे दशक के शुरू में दोनों महाशक्तियों की संधियाँ आन्तरिक विरोधों तथा प्रत्येक ब्लॉक के अन्दर पैदा होने वाले अविश्वासों के कारण ढीली होनी शुरू हो गईं। 1950 के दशक के मध्य के आसपास जो मूलभूत परिवर्तन हुए उन्होंने संधियों को और कमजोर कर दिया तथा सन्धियों की भागीदारी की कठोरता गायब होने लगी। इससे कठोर द्वि–ध्रुवीकरण ढीला पड़ने लगा तथा बहु केन्द्रवाद की उत्पत्ति होने लगी।

15.2 बहु–ध्रुवीयकरण हेतु उत्तरदायी कारक

15.2.1 सोवियत ब्लाक का कमजोर होना

यूगोस्लाविया तथा सोवियत गुट के कुछ अन्य राज्यों में राष्ट्रवादी शक्तियों में वृद्धि शुरू होने से विभिन्न देशों में राष्ट्रवादी तत्व अपनी स्वायत्तता का दावा करने लगे। 1948

में यूगोस्लाबिया अपने आप को सोवियत संघ की शक्ति से छुड़ाने में सफल हो गया। यूगोस्लाविया द्वारा अपनी विदेश नीति सम्बन्धी निर्णय करने की स्वतन्त्रता का दावा करना सोवियत गुट में पहली दरार थी। इसके अतिरिक्त सोवियत नियन्त्रण के प्रति पूर्वी यूरोपीय देशों में असन्तोष जो कुछ वर्ष पूर्वी जर्मनी में प्रतिबिम्बित हो गया था, 1956 में हंगरी के विद्रोह के कारण चरम सीमा पर पहुंच गया। यद्यपि सोवियत संघ इस विद्रोह को दबाने में सफल हो गया था, फिर भी इस घटना से सोवियत संघ के अपने गुट पर नियन्त्रण को लेकर काफी धक्का लगा।

15.2.2 सोवियत संघ तथा चीन के बीच विचारधारा सम्बन्धी विरोध

खुश्चेव तथा माओं के बीच विचारधारात्मक विरोध तथा परिणामस्वरूप सोवियत संघ तथा चीन के बीच होने वाले विरोध ने सोवियत संघ के प्रभाव को काफी धक्का पहुंचाया। चीन सोवियत सीमा विवाद का प्रभाव, वह गति जिससे चीन ने अपनी परमाणु क्षमता को विकसित किया, 1970 के शुरू में चीन अमरीका का पुनर्मिलन, संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन का प्रवेश तथा इसे वीटो शक्ति का मिलना तथा अफगानिस्तान, कम्पूचिया और सिक्यांग के सम्बन्ध में दोनों देशों के मतभेद सोवियत संघ पर दबाव डालने वाले साधन बने। इसके भार के नीचे दबा सोवियत संघ अपनी सन्धियों के भागीदारों पर नियन्त्रण खोने लगा।

15.2.3 पूर्वी यूरोप में मुक्ति लहर

चीन के अनुभवों ने सोवियत संघ की पूर्वी यूरोपीय मित्र राष्ट्रों से अधिक उदारतापूर्वक व्यवहार करने की आवश्यकता के प्रति सचेत कर दिया। पॉलैंड तथा चैकोस्लोवाकिया में उदारवादी आन्दोलन ने तथा रूमानिया द्वारा प्रदर्शित कार्य करने की स्वतन्त्रता ने सोवियत धड़े को और भी कमजोर कर दिया। पश्चिमी यूरोप तथा पूर्वी यूरोपीय राष्ट्रों पर सोवियत संघ का नियन्त्रण और भी कम कर दिया। सोवियत धड़े में आने वाली इस कमजोरी ने द्वि–ध्रुवीकरण व्यवस्था को कमजोर कर दिया तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में बहु–ध्रुवीकरण के प्रादुर्भाव के लिए भूमिका तैयार कर दी।

15.2.4 अमरीकी ब्लॉक का कमजोर होना

स्वेज संकट तथा अमरीका बीसवीं शताब्दी के पाँचवे दशक के मध्य में अमरीकी धड़े में भी दरारें पड़ गई। 1956 में ब्रिटेन तथा फ्रांस अमरीका को सूचना दिये बिना या उससे सलाह किए बिना स्वेज अभियान में जुट गए। यह घटना अमरीकी धड़े में पहली दरार सिद्ध हुई।

15.2.5 फ्रांसीसी नीतियां

जनरल डि गॉल के नेतृत्व में फ्रांस विश्व राजनीति में स्वतन्त्र शक्ति केन्द्र बनने के प्रयत्न करने लगा तथा फ्रांस की यह नीति स्पष्ट रूप से अमरीका के अपने मित्र राष्ट्रों पर नियन्त्रण की कमजोरियों को प्रकट करने लगी। साम्यवादी देशों तथा चीन के साथ अपने सम्बन्ध बढ़ाने के फ्रांस के निर्णय से अमरीका के साम्यवाद के प्रति विलगता के विचारों को गहरा धक्का लगा। इसके अतिरिक्त वियतनाम में अमरीका नीति के प्रति पनपे घोर विरोध, कामन मार्किट में ब्रिटेन का प्रवेश तथा सारे यूरोप द्वारा बड़े स्तर पर नाटो राष्ट्रों में पोलारिस मिसाइलों को लगाकर सैन्यीकरण करने में अमरीका के प्रयत्नों का विरोध, इन सबके कारण जनरल डि गॉल ने फ्रांस को अमरीका के नियन्त्रण से स्वतन्त्र रखने का निर्णय लिया। फ्रांस द्वारा दक्षिण पूर्वी एशिया को स्वतन्त्र करने तथा 1966 में नाटो से

निकल जाने की धमकी ने इस विचार को और भी स्पष्ट कर दिया। फ्रांस को एक स्वतन्त्र शक्ति केन्द्र बनाने के लिए जनरल डि गॉल ने स्वतन्त्र परमाणु क्षमता का विकास करने का निर्णय किया। 1969 में जनरल डि गॉल युग के समापन तक फ्रांस ने विश्व राजनीति में बड़ी परमाणु शक्ति बनने के मार्ग पर चलने का अपना निर्णय दृढ़ कर लिया था। छठे दशक के अन्त में फ्रांस की नीति ने अमरीका ब्लॉक में बड़ी गहरी दरारें पैदा कर दीं।

15.2.6 लैटिन अमरीका में राश्ट्रवाद का मजबूत होना

लैटिन अमरीका में राष्ट्रवादी शक्तियों ने जो सफलता प्राप्त की थी उससे भी दूसरे राष्ट्रों पर अमरीका का नियन्त्रण और भी कम हो गया। चाहे अमरीका महाद्वीप के देशों पर अमरीका अपना प्रभाव बनाये रखने में लगातार सफल रहा, फिर भी इसके इन प्रयत्नों का काफी विरोध हुआ। क्यूबा के साम्यवादी देश के रूप में उभरने से इस महाद्वीप में अमरीका का नियन्त्रण कम हो गया।

15.2.7 गुटनिरपेक्षता तथा तीसरे विश्व का उदय

भारत तथा कई दूसरे देशों द्वारा महाशक्तियों के गुटों से अलग रहने, शीत युद्ध में तटस्थ रहने तथा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में स्वतन्त्र भूमिका निभाने के निर्णय ने भी द्वि–ध्रुवीकरण के बहु–ध्रुवीकरण में बदलने में काफी सहायता की। नासिर का मिस्त्र तथा नकरूमा का घाना नए उभरने वाले राज्यों में प्रमुख थे जिन्होंने निर्गुट रहने का निर्णय किया। धीरे–धीरे गुटनिरपेक्षता की अवधारणा अधिक–से–अधिक समर्थन प्राप्त करती गई तथा 1961 तक यह एक अन्तर्राष्ट्रीय आन्दोलन बन गई। गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों तथा तीसरे विश्व का उभरना शीत युद्ध तथा द्वि–ध्रुवीकरण के विरोध के प्रतीक बने। गुटनिरपेक्षता की सफलता ने द्वि–ध्रुवीकरण व्यवस्था को बहुत क्षीण कर दिया। क्योंकि कम से कम आधी मानवता ने दोनों प्रतिद्वन्दी धड़ो में शामिल होने के विरूद्ध निर्णय किया।

15.2.8 परमाणु क्लब का विस्तार

महाशक्तियाँ अपना परमाणु एकाधिकार केवल कुछ समय तक ही कायम रख सकीं। कैनेडा परमाणु क्षमता प्राप्त करने वाला तीसरा राष्ट्र बन गया। सातवें दशक में फ्रांस तथा चीन भी परमाणु क्षमता प्राप्त करने में सफल हो गये और तब से दोनों तेजी से परमाणु शस्त्रों के विकास करने लगे। 1974 में भारत भी पूर्णतया नियन्त्रित शान्तिपूर्ण परमाणु विस्फोट करके इस परमाणु क्लब में शामिल हो गया। परमाणु क्लब में विस्तार के कारण भी बहु–ध्रुवीकरण का विकास हुआ। 1945–90 के मध्य चाहे इन दोनों महाशक्तियों के अतिरिक्त दूसरे देशों द्वारा बनाए जाने वाले हथियार अमरीका तथा भूतपूर्व सोवियत संघ की परमाणु श्रेष्ठता को प्रभावित कर पाने की स्थिति में नहीं थे फिर भी अपने स्वामियों को इन्होंने विदेश नीति में और अधिक लचीलापन तथा स्वतन्त्रता लाने के लिये बाध्य किया।

15.2.9 नए राज्यां का प्रादुर्भाव

एक अन्य तत्व जिसने अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था में द्वि–ध्रुवीकरण में रूपान्तरित किया, वह था विश्व राजनीति में नए राष्ट्रों का प्रादुर्भाव। 1947 में शुरू होकर लेकिन 1960 में और अधिक तेजी से नये प्रभुसत्ता–सम्पन्न राष्ट्रों के प्रादुर्भाव में काफी वृद्धि हुई। केवल एक वर्ष में अर्थात् 1960 में करीब करीब 17 नए प्रभुसत्ता सम्पन्न राष्ट्रों ने संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रवेश किया। यह प्रक्रिया दस साल तक चलती रही। ये नए राष्ट्र अपनी मेहनत से प्राप्त की गई स्वतन्त्रता को बनाये रखने के लिए वचनबद्ध थे तथा शक्तिशाली राष्ट्रों,

विशेषकर दोनों महाशक्तियों के प्रति बहुत अधिक संशयी थे। परिणामस्वरूप वे किसी भी ब्लॉक में शमिली होने के लिए तैयार नहीं थे क्योंकि वे यह महसूस करते थे कि इससे अप्रत्यक्ष रूप में उनके काम करने की स्वतन्त्रता सीमित हो जाएगी। गरीबी, कम विकास तथा सामान्य मुश्किलें जो उन्होंने साम्राज्यवाद तथा उपनिवेशवाद के शिकंजे में रह कर भुगती थीं, इन सब ने उन्हें शक्ति गुटों का विरोधी बना दिया था। अमरीका तथा सोवियत संघ द्वारा इन्हें अपने–अपने गुटों में शामिल होने के लिए फुसलाने की नीति भी अपनायी गयी। इससे इन्हें शक्ति गुटों के प्रति और अधिक शंकित कर दिया तथा उन्होंने अलग रहने का तथा किसी भी एक गुट के साथ अपने आपको न बांधने का निर्णय कर लिया। उन्होंने दोनों से अथवा एक से सहायता लेना तो स्वीकार किया परन्तु राजनीतिक बंधनों से मुक्त रहकर अपना अलग अस्तित्व बनाये रखने के लिए उन्होंने संयुक्त राष्ट्र तथा दूसरी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं में अपनी भूमिकाओं में सामंजस्य स्थापित करना शुरू कर दिया। इन राज्यों ने धीरे–धीरे एक बहुराज्यीय समूह बनाना शुरू कर दिया जिसमें सामूहिक प्रभाव की क्षमता थी। इस प्रक्रिया में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में एक तीसरी शक्ति अर्थात् तीसरा विश्व पैदा हो गया। तीसरे विश्व के उदय ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था में द्वि–ध्रुवीय व्यवस्था को बहु–ध्रुवीय बनाने की मुख्य भूमिका निभाई। तीसरे विश्व के प्रादुर्भाव ने सार्वभौमिक द्वि–ध्रुवीयता को ढीला कर दिया, क्योंकि इसमें कितने ही ब्लॉकविहीन कार्यकर्ता थे।

15.2.10 पश्चिमी यूरोप का आर्थिक एकीकरण

पश्चिमी यूरोपीय राष्ट्रों द्वारा संगठित क्षेत्रीय आर्थिक संस्थाओं जैसे द्वारा बड़े पैमाने पर तथा तेजी से किए जाने वाले विकास ने भी पश्चिमी यूरोप के राष्ट्रों को अमरीका नियन्त्रण तथा प्रभाव से स्वतन्त्र कर दिया। ये राष्ट्र अपने आर्थिक विकास द्वारा इतने सक्षम हो गए कि इन्होंने द्वि–ध्रुवीय राजनीति के प्रति अधीनता छोड़ने की क्षमता प्राप्त कर ली। आर्थिक मेल–मिलाप द्वारा प्राप्त आर्थिक समृद्धि ने पश्चिमी यूरोप के राष्ट्रों, विशेषतः फ्रांस ने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अमरीका की प्रधानता की चुनौती देने तथा कमजोर करने में सहायता की। वर्तमान समय में यूरोपीय संघ शक्ति का एक दृढ़ तथा संगठित केन्द्र है।

15.2.11 मुख्य आर्थिक शक्तियों के रूप में जापान तथा पश्चिमी जर्मनी का उदय

दूसरे विश्व युद्ध के समाप्त होने से तीस साल के अन्दर–अन्दर जापान तथा पश्चिमी जर्मनी (अब जर्मनी) दोनों न केवल युद्ध के मध्य बड़े पैमाने पर हुई आर्थिक क्षति पर काबू पाने में सफल हुए बल्कि इन्होंने औद्योगिक उत्पादन तथा तकनीकी विकास में अभूतपूर्व सफलता भी पाई। जापान तथा पश्चिमी जर्मनी को दो बड़ी आर्थिक शक्तियाँ बनने से बहु–ध्रुवीकरण के प्रादुर्भाव की प्रक्रिया को बहुत अधिक प्रभावित कर दिया। चाहे सैन्य शक्ति के रूप में ये शक्तियाँ कमजोर थीं, फिर भी ये राज्य अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के मुख्य कार्यकर्ता बने। तकनीकी रूप से तो ये अमरीका के साथ जुड़े रहे हैं परन्तु वास्तव में दोनों अपने विदेश सम्बन्धों के संचालन में काफी स्वतन्त्र रहे। जापान तथा पश्चिमी जर्मनी की आर्थिक शक्ति के प्रभावाधीन 1970–90 के बीस वर्षों में द्वि–ध्रुवीकरण की व्यवस्था बहु–ध्रुवीकरण की व्यवस्था भी बन गई।

15.3 निष्कर्ष

ये सभी तत्व अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में द्वि–ध्रुवीकरण के बहु–ध्रुवीकरण में रूपान्तरण के लिए उत्तरदायी रहे हार्टमैन के अनुसार दूसरे विश्वयुद्ध के बाद पहला दशक महाशक्तियों तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में द्विध्रुवीकरण का युग था। तथापि 1955 से

द्वि–ध्रुवीकरण निरन्तर पतन की ओर चला तथा इसके स्थान पर बहु–ध्रुवीकरण तथा बहु–केन्द्रवाद उदित हुआ। निःसंदेह 1960 के बाद कठोर द्वि–ध्रुवीकरण का युग समाप्त हो गया तथा दोनों महाशक्तियों के अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में कई शक्ति केन्द्र बन गए।

15.4 सन्दर्भ ग्रंथ

- 21वीं सदी में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध : पुष्पेश पन्त
- अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध के सिद्धान्त 'एक परिचय' : अजय कुमार
- अन्तर्राष्ट्रीय संगठन : पुष्पेश पन्त

15.5 सम्बन्धित प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. बहुध्रुवीयकरण क्या है? इसकी उत्पत्ति के कारकों की विवेचना करें।
2. द्विध्रुवीकरण क्या है? इसके लिए उत्तरदायी कारकों की विवेचना कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. बहुध्रुवीय व्यवस्था की प्रमुख विशेषतायें क्या हैं?
2. वर्तमान वैश्विक सन्दर्भ में बहुध्रुवीय व्यवस्था की आवश्यकताओं को रेखांकित करें।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

DCEPS-103
अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध

खण्ड – 2

अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ एवं क्षेत्रीय संगठन

इकाई – 16 29

सयुंक्त राष्ट्र संघ : भूमिका एवं सुधार की मांग

इकाई – 17 33

आई0बी0आर0डी0 अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व व्यापार संगठन

इकाई – 18 45

क्षेत्रीय संगठन : यूरोपीय समुदाय, आसियान, एपेक, सार्क (दक्षेस), ओ0आई0सी0 तथा ओ0ए0यू0

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

DCEPS-103

कुलपति एवं मार्गदर्शक

प्रो. सीमा सिंह — **उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज**

विशेषज्ञ समिति

(1) **प्रो. एम. पी. सिंह – सदस्य**
प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, 34 उत्तरांचल अपार्टमेंट, 5, आईपी एक्सटेंशन पटपड़गंज, नई दिल्ली

(2) **प्रो. एस.पी. एम त्रिपाठी – सदस्य**
प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

(3) **प्रो.एल.आर.गुर्जर – सदस्य**
प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, वर्धमान महावीर मुक्त विश्वविद्यालय, कोटा राजस्थान

(4) **डॉ.दीपशिखा श्रीवास्तव – सचिव**
शैक्षणिक परामर्शदाता ,राजनीतिक विज्ञान विभाग, यू.पी.आर.टी.ओ.यू ,प्रयागराज

लेखक

1. **प्रो0 संजय श्रीवास्तव** — **प्रोफेसर, राजनीतिक विज्ञान,**
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय
(इकाई–04, 05, 15)

2. **डॉ0 विश्वनाथ मिश्रा** — **असि0 प्रोफेसर, राजनीतिक विज्ञान**
आर0 महिला पी0जी0 कालेज वाराणसी
(इकाई– 06, 07, 08, 09, 10, 11, 12)

3. **डॉ0 स्वाती सुचरिता नन्दा** — **असि. प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान**
डी0ए0वी0 पी0जी0 कालेज वाराणसी
(इकाई–01, 02, 03, 21, 22, 23)

4. **डॉ0 अर्चना सुदेश मैथ्यू** — **असि. प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान**
पी0जी0 कालेज छिन्दवाड़ा, मध्य प्रदेश
(इकाई–13, 14, 16, 17, 18)

5. **डॉ दीपशिखा श्रीवास्तव** — **शैक्षणिक परामर्शदाता, राजनीतिक विज्ञान**
यू.पी.आर.टी.ओ.यू ,प्रयागराज
(इकाई– 19, 20)

संपादक / परिमापक

डॉ. नागेश्वर प्रसाद शुक्ला — प्राचार्य गन्ना उत्पादक पी0जी0 कालेज, बहेड़ी, बरेली

समन्वयक

डॉ. दीपशिखा श्रीवास्तव, — शैक्षणिक परामर्शदाता, राजनीतिक विज्ञान विभाग, यू.पी.आर.टी.ओ.यू, प्रयागराज

(मुद्रित)

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0 International License.

ISBN- 978-93-83328-37-6

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन – उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज–211021

इकाई-16

संयुक्त राष्ट्र संघ : भूमिका एवं सुधार की मांग

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 सेकुलर शब्द

16.3 धर्मनिरपेक्षता क्या है?

16.4 धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया

16.5 धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया की विशेषता

16.6 धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया तथा आधुनिक समाज

16.7 सारांश

16.8 शब्दावली

16.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

16.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

16.0 उद्देश्य

1. सेकुलर अथवा धर्मनिरपेक्षता क्या है ?
2. धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा
3. धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया
4. धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया की विशेषताएँ

16.1 प्रस्तावना

धर्मनिरपेक्षता, पंथनिरपेक्षता अथवा लौकिकवाद आधुनिक सामाजिक व्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण माने जाते हैं। यह ऐसी स्थिति है जिसमें राज्य सभी धर्मों, पंथों एवं विचारधाराओं के प्रति तटस्थ होता है तथा उन्हें उनके पालन करने हेतु पूरी आजादी देता

है। सामाजिक स्तर पर भी यह अपेक्षा की जाती है कि समाज के सदस्य अन्य समुदायों के प्रति सहिष्णुता का व्यवहार प्रदर्शित करें।

16.2 सेकुलर शब्द

धर्मनिरपेक्ष या पंथनिरपेक्ष शब्दों के लिए अंग्रेजी का शब्द ''सेकुलर'' सामान्यतः प्रयोग में लाया जाता है। कई बार सेकुलर शब्द से तात्पर्य नास्तिकता से लगाया जाता है, जो बिल्कुल गलत है।

16.3 धर्मनिरपेक्षता क्या है?

भारतीय संदर्भों में धर्मनिरपेक्षता से मतलब सभी धर्मों को उनके विकास तथा रीति रिवाजों के पालन के लिए समान स्तर प्रदान करना है। राज्य सभी धर्मों के प्रति समानता का भाव एवं दूरी को प्रदर्शित करता है तथा व्यवहार के निर्धारण एवं मापदंड में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप न करते हुए सामाजिक कल्याण की भावना पर बल देता है।

राजनीतिक एवं व्यक्तिगत स्तर पर भी इसी भावना को बल प्रदान करने वाले ''सेकुलर'' कहलाते हैं तथा इस विचारधारा पर काम करने वाले राज्य ''सेकुलर राज्य'' कहलाते हैं ।

लौकिकवाद अथवा धर्मनिरपेक्षता एक ऐसे सिद्धांत पर आधारित सामाजिक–नैतिकता की एक व्यवस्था है, जिसमें धर्म के नैतिकता के मापदंड तथा व्यवहार के निर्धारण के लिए बिना हस्तक्षेप के वर्तमान जीवन तथा सामाजिक कल्याण की भावना पर बल दिया जाता है। यह विचारधारा घटनाओं के निर्णय करने में धर्म परम्परा अथवा प्रथाओं को महत्व नहीं देती। इसके विपरित घटनाओं अथवा समस्याओं का निर्धारण, इस व्यवस्था के अनुसार, बुद्धिसंगतता के आधार पर किया जाता है।

लौकिकीकरण की विचारणा यह मानती है कि लौकिकीकरण, औद्योगिक समाज और संस्कृति के आधुनिकीकरण की एक अपरिहार्य विशेषता है। इस विचारणा के पक्ष में यह कहा जाता है कि आधुनिक विज्ञान ने पारंपरिक विश्वासों की महत्ता को घटना दिया है। जीवन–जगतों के बहुवादीकरण में धार्मिक प्रतिकों के एकाधिकार पर आघात किया है। नगरीकरण की प्रवृत्ति में व्यक्तिवादी और मानक शून्यतावादी जगत को जन्म दिया है। पारिवारिक जीवन के विच्छेदन ने धार्मिक संस्थाओं को कम सार्थक बनाया है। प्रौद्योगिकी ने परिवेश पर नियंत्रण कर ईश्वर की सर्वव्यापकता के विचार को कमजोर कर दिया है। इस अर्थ में जैसा कि मैक्सवेबर ने कहा है कि लौकिकीकरण को समाज के विवेकीकरण के एक माप के रूप में प्रयोग किया जा रहा है।

अतः आधुनिक समय में धर्म को अब एक सामाजिक जड़ता के रूप में देखना सही नहीं रहा है । बल्कि उसे विकास के संदर्भ में धर्म की कल्याणकारी भूमिका एवं धर्मनिरपेक्ष सिद्धांतों की व्यवहारिक खोज से देखा जाना जरूरी है ।

16.4 धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया

19वीं शताब्दी में ब्रिटिश आन्दोलनकारी जी. होल्के के नेतृत्व में धर्मनिरपेक्षीकरण का उद्भव एवं विकास माना जाता है ।

यदि किसी समाज के सदस्यों के विचार धार्मिक मान्यताओं के विपरीत अधिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण या तार्किकता के आधार पर महत्व देने लगते हैं तो इस प्रक्रिया को धर्मनिरपेक्षीकरण कहते हैं ।

16.5 धर्मनिरपेक्षीकरण की विशेषताएँ

मूर के अनुसार इसकी 3 विशेशताएँ हैं –

1. दैनिक जीवन में धार्मिक नियंत्रण शिथिल होना ।
2. तर्कशक्ति के आधार पर धार्मिक सिद्धांतों के मानसिकता में बदलाव ।
3. सांस्कृतिक व्यवहारों में भी तार्किक आधार पर बदलाव ।

इस तरह किसी समाज में धार्मिक सम्प्रदायवाद के बजाय निरपेक्ष आधार पर की जा रही पुनर्रचना की प्रक्रिया धर्मनिरपेक्षीकरण कहलाती है ।

16.6 धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया तथा आधुनिक समाज

औद्योगिक एवं आधुनिक समाजों में दुनिया को ज्यादा अधिक तरह से समझने के लिए धर्म की अपेक्षा वैज्ञानिक तथ्यों एवं व्यवहार को ज्यादा स्थान दिया जाता है तथा धर्म एक सामाजिक नियंत्रण के साधन के रूप में कमजोर हुआ है। इसके स्थान पर राज्य की संस्थाएँ तथा वैधानिक कानून आधुनिक जीवनशैली में अधिक कारगर एवं प्रासंगिक लगते हैं। परिणामस्वरूप मानवीय जीवन में एक लक्ष्य के रूप में अब आध्यात्मिकता के स्थान पर भौतिकता का स्थान प्रमुख एवं लोकप्रिय है। विश्व एवं अधिकांश भारतीय समाज में यह एक विशिष्ट लक्षण एवं प्रक्रिया के रूप में परिलक्षित हो रहा है ।

16.7 सारांश

प्रायः किसी हिन्दी शब्दावली के साथ उसके अंग्रेजी शब्द से उसके भाव को समझने में सहायता मिलती है। धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा को सामान्य शब्दों में व्यक्त किया गया है। धर्मनिरपेक्षता के सामाजिक व्यवहार एवं उसके प्रति प्रतिक्रिया को चिन्हित किया गया है। धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया विशेषताओं से यह और अधिक स्पश्ट हो जाता है।

अंत में प्रक्रिया एवं आधुनिक समाज के सह–संबंध को लिखा गया है ।

16.8 शब्दावली

- सेकुलर धर्मनिरपेक्ष या पंथनिरपेक्ष
- धर्मनिरपेक्ष समाज ऐसा समाज है जो उपयोगतावादी तथा तर्कसंगत मूल्यों पर अधिक बल देता हो, परिवर्तन एवं नवीन आचार–विचारों को अपनाने हेतु तत्पर हो, धर्मनिरपेक्ष समाज कहलाता है।

16.9 उपयोगी पुस्तकें

- बर्गर पीटर, एल 1969, द सोश्यल रिअलिटी ऑफ रिलीजन

➢ विलसन, ब्रायन, 1982, रिलीजन इन सोशियोलॉजिकल प्रस्पक्टिव

➢ लुकमेन थॉमस, 1963, द इन विलिबल रिलीजन

16.10 बोध प्रश्न

➢ धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा को तीन पंक्तियों में लिखिए?

____

____

➢ धर्मनिरपेक्षता की प्रक्रिया की तीन विशेषताओं को लिखिए?

____

____

➢ धर्मनिरपेक्ष समाज को 50 शब्दों में समझाये?

____

____

➢ धर्मनिरपेक्षीकरण के आवश्यक तत्व निम्न में से कौन से है?

(अ) विभेदीकरण की प्रक्रिया

(ब) तार्किकता

(स) धार्मिक संकीर्णता का ह्यस

(द) उपयुक्त सभी

उत्तर – (द) उपयुक्त सभी

➢ धर्म की दृष्टि से भारत एक ....राष्ट्र है।

(अ) हिन्दू (ब) धर्म निरपेक्ष

(स) धर्म सापेक्ष (द) विधर्मी

उत्तर – (ब) धर्म निरपेक्ष

इकाई-17

आई0बी0आर0डी0 अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व व्यापार संगठन

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 आर.बी.आर.डी. 1. उद्देश्य, 2. गठन, 3. कार्य, 4. मूल्यांकन

17.3 अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष 1. उद्देश्य

17.4 विश्व व्यापार संगठन : सिद्धान्त, संरचना, उद्देश्य, कार्य, विश्व व्यापार समझौता, मंत्रीस्तरीय सम्मेलन, मूल्यांकन

17.5 सारांश

17.6 शब्दावली

17.7 सम्बन्धित प्रश्न

17.8 संदर्भ ग्रंथ

17.0 उद्देश्य

इस इकाई में प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठनों की संरचना एवं भूमिका पर चर्चा की गयी है। इसका उद्देश्य है-

1. प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठनों की संरचना और कार्य को समझाना।
2. उक्त अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठनों के प्रभाव के मूल्यांकन पर प्रकाश डालना।
3. तेजी से बदलती आर्थिक व्यवस्था की प्रकृति को बोधम्य बनाना।

17.1 प्रस्तावना

वर्तमान युग को वैश्वीकरण का युग कहा जाता है। संचार माध्यम वे तकनीक ने विश्व को सीमित कर दिया है। उदारीकरण और बजारीकरण की लहर ने विश्व को वैश्विक बाजार में बदल दिया है और आर्थिक विकास सर्वोपरि हो गया है। आर.बी.आर.डी. अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन जैसी संस्थाऐं महत्वपूर्ण हो गयी हैं। अतः अन्तर्राष्ट्रीय संबंधो को समझने के लिए उक्त संस्थाओं के गठन, कार्य एवं प्रक्रियाओं का अध्ययन महत्वपूर्ण हो गया है। यहाँ प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठनों के विषय में जानकारी प्रस्तुत करेंगे।

17.2 आर0बी0आर0डी0

पुनर्निर्माण एवं विकास के लिए अन्तर्राष्ट्रीय बैंक

I.B.R.D. की स्थापना 1945 में हुई थी। I.B.R.D. अन्य सहयोगी संस्थाओं के साथ विश्व बैंक के नाम से जाना जाता है। वर्तमान में इसके अन्तर्गत निम्न संस्थाएँ हैं।

1. अन्तर्राष्ट्रीय विकास एवं पुनर्निर्माण बैंक I.B.R.D.
2. अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ IDA
3. अन्तर्राष्ट्रीय वित्त निगम IFC
4. बहुपक्षीय निवेश गारण्टी संस्था MIGA
5. निवेश विवादों को सुलझाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र ICSID

उक्त पांचों संस्थाओं के समूह को विश्व बैंक कहते हैं। भारत ICSID को छोड़कर अन्य चारों संस्थाओं का सदस्य है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व में आर्थिक संकट था। विश्व युद्ध के व्यस्त अर्थव्यवस्थाओं के पुर्ननिर्माण, व्यापार असंतुलन को दूर करने और स्वतंत्र हो रही अल्प विकसित अर्थ व्यवस्था के विकास हेतु IBRD या विश्व बैंक का गठन किया गया, इसी अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का गठन भी किया गया।

विश्व बैंक के उद्देश्य :

विश्व बैंक की प्रथम धारा में ही इसके उद्देश्यों का वर्णन है जो निम्नानुसार है-

A. सदस्य राज्यों के विकास एवं आर्थिक पुनर्निर्माण हेतु दीर्घकालीन ऋण प्रदान करना/इसके तीन उद्देश्य है।
   1. युद्ध से क्षतिग्रस्त अर्थव्यवस्थाओं का पुनर्निर्माण।
   2. शांति कालीन स्थिति में विकास के लिए पुनः वित्त प्रदान करना।
   3. अल्प विकसित देशों के उत्पादन व संसाधनों का विकास करना।

B. भुगतान संतुलन में समानता लाना। इस हेतु अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के संतुलित एवं सतत् विकास हेतु पूंजी के दीर्घकालीन विनियोग को प्रोत्साहित करना ताकि उत्पादन बड़े और जीवन स्तर में सुधार हो सकें।

C. सदस्य देशों में पूंजी निवेश को प्रोत्साहित करना। इस हेतु निम्न प्रावधान है-
   1. निजी ऋण एवं पूंजी निवेश की गारण्टी देना।
   2. पूंजी निवेश में कमी हो तो स्वयं अपनी शर्तो पर उत्पादन हेतु ऋण उपलब्ध करवाना।

D. छोटी और बड़ी परियोजनाओं के लिए ऋण देना और ऋण हेतु गारण्टी देना।

E. जीवन स्तर ऊंचा उठाने और मानवीय विकास हेतु परियोजनाएं एवं कार्यक्रम चलाना।

विश्व बैंक का गठन-

यदि कोई देश अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का सदस्य बनता है तो स्वतः वह विश्व बैंक का सदस्य बन जाता है। यदि वह अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की सदस्यता त्यागता है तो विश्व बैंक की सदस्यता भी स्वतः समाप्त हो जाती है। किसी देश को सदस्यता से निम्न दो आधार पर वंचित किया जा सकता है-

1. स्वयं राष्ट्र सूचित करने के पश्चात् त्यागपत्र दे सकता है। लेकिन यदि उसने ऋण लिया है तो उसे भुगतान करना पड़ेगा।
2. बैंक के नियमों के उल्लंघन के चलने गर्वनर मंडल द्वारा भी किसी देश को सदस्य से वंचित किया जा सकता है।

इसके सदस्य दो स्तर के हैं पहले मौलिक सदस्य इनकी संख्या 30 है, जिन्होंने 31 दिसम्बर 1945 से पूर्व बैंक की सदस्यता ले ली है।

दूसरे सामान्य सदस्य, जिनकी सदस्यता 31 दिसम्बर, 1945 के पश्चात् की है, विश्व बैंक की कुल सदस्यता संख्या 185 है।

गर्वनर मंडल

बैंक का संचालन गर्वनर मंडल करता है। इसमें प्रत्येक सदस्य देश का एक प्रतिनिधि होता है जिसे गर्वनर कहा जाता है। किन्तु बैंक के समस्त कार्य अधिशासी गर्वनर करते है, जिनकी संख्या 21 है, जिनका बैंक के कैपिटल स्टॉक (पूँजी) में सबसे बड़ा भाग होता है। विश्व बैंक का अध्यक्ष भी होता है। चूंकि अमेरिका सबसे बड़ा शेयर धारक है, अतः सामान्यतः अमेरिकी नागरिक ही विश्व बैंक अध्यक्ष बनता रहा है। विश्व बैंक का मुख्यालय **वाशिंगटन डी.सी.** में है।

विश्व बैंक के कार्य

सर्वप्रथम बैंक का मुख्य कार्य अल्प विकसित राष्ट्रों को विकास हेतु ऋण उपलब्ध कराना है। ऋण 5 से 20 वर्ष की अवधि के लिए दिये जाते हैं। लघु व वृहद् परियोजनाओं के लिए भी ऋण मिलते है इस हेतु निम्न प्रावधान हैं-

1. बैंक अपनी प्रदत्त पूंजी में से 20 प्रतिशत तक अपने कोष से सदस्यों को ऋण दे सकता है।
2. व्यक्तिगत गारण्टी पर भी ऋण सुविधा है। इस हेतु संबंधित देश की स्वीकृति व सेवा शुल्क 1 प्रतिशत तक वसूला जाता है।
3. ऋण की मांग, ब्याज दर आदि शर्तें बैंक द्वारा निर्धारित की जाती है।
4. सामान्यतया ऋण विकास परियोजनाओं हेतु स्वीकृत होते हैं।
5. ऋण का भुगतान स्वर्ण अथवा प्राप्त मुद्रा में हो सकता है।

उदाहरण- ऋण यदि डॉलर में लिया है तो चुकाना भी डॉलर में ही पड़ेगा। संबंधित देश की मुद्रा मान्य नहीं होगी।

ऋण के अतिरिक्त सदस्य देशों को तकनीकी सेवाएं भी दी जाती है। इस हेतु बैंक ने **''द इकोनॉमिक डेवलमेंन्ट इंस्टीटयूट''** (आर्थिक विकास संस्थान) की स्थापना वाशिंगटन में की है।

मूल्यांकन-

यद्यपि विश्व बैंक वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण संस्था है। इसने विकास एवं पुनर्निर्माण हेतु पर्याप्त ऋण उपलब्ध कराया है, जैसे- भारत की मदद के लिए 1958 में 'भारत सहायता क्लब' की स्थापना की गई थी। इसका वर्तमान नाम ''भारत विकास मंच'' है। इससे विकासशील देशों को ऋण व विभिन्न परियोजनाएं संचालित हो रही हैं, लेकिन 2003 की रिपोर्ट कहती है कि अभी भी बैंक में प्रभुत्व विकसित राज्यों का ही है। इसकी नीतियां विकासशील देशों के प्रतिकूल है, जैसे- औद्योगिक राज्यों के उत्पादनों की तुलना में विकासशील देशों पर प्रशुल्क अधिक है, कुल मिलाकर विश्व बैंक की नीतियों में परिवर्तन की मांग विकासशील देशों द्वारा की जाती रही है। यद्यपि 2001 के पश्चात् आई वैश्विक मंदी के दौरान् बैंक द्विवर्षीय विशेष कार्य योजना (सैप) शुरू की है, जिसका उद्देश्य आर्थिक संकट से जूझ रहे देशों का नीतिगत परामर्श के साथ वित्तीय उपायों द्वारा मदद की जा सके।

बोध प्रश्न-

1. विश्व बैंक के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिये?

   ....

   ....

   ....

2. गर्वनर मंडल क्या है? उसके गठन पर प्रकाश डालिए?

   ....

   ....

   ....

3. विश्व बैंक के प्रमुख कार्य कौन से हैं?

   ....

   ....

   ....

17.3 अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एक अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक संगठन है। 1944 में द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान 40 देशों के प्रतिनिधि न्यू हैम्पशायर के ब्रिटेन वुड नामक स्थान पर एकत्र हुए। उनका उद्देश्य नई अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा प्रणाली का निर्माण करना था, जिससे एक उदार आर्थिक प्रणली जो अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग पर आधारित हो बन सकें। अमेरिका को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा प्रबंधन की जिम्मेदारी दी गई। सभी देश अपनी मुद्रा को स्वर्ण के साथ साम्य स्थापित करने के लिए सहमत हो गये। सभी देशों ने व्यापार को बढ़ावा देने के लिए नई मौद्रिक नीति स्वीकार कर ली जिसे ब्रिटेन बुडस व्यवस्था कहा गया।

यूरोप के पुर्ननिर्माण की मार्शल योजना, अमेरिका की टर्की, ग्रीन के लिए इमैन सिद्धांत के साथ ही शीतयुद्ध में हो रहे खर्चे और सोवियत खेमे से जाने से रोकने के लिए विकासशील देशों को भारी सहायता और अनुदान अमेरिका ने दिये जो डॉलर में थे, इस प्रकार डॉलर विश्व मुद्रा बन गई और अमेरिका प्रमुख कर्ज दाता।

ब्रिटेन बुड्स सम्मेलन के लिए गए निर्णय के अनुसार 1945 को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की स्थापना वाशिंगटन में हुई वर्तमान में इसके 184 देश सदस्य हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के उद्देश्य

अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक प्रबंधन इसकी प्रमुख जिम्मेदारी है। इसके उद्देश्य निम्न हैं-

1. अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक सहयोग को प्रोत्साहित करना।
2. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के सन्तुलित विकास को प्रोत्साहन देना।
3. विनिमय दरों में स्थिरता रखना।
4. बहुपक्षीय भुगतानों की व्यवस्था करना साथ ही विनिमय प्रतिबंधों को कम करना या समाप्त करना।
5. प्रतिकूल भुगतान सन्तुलन को सुधारने के लिए सदस्य देशों को आर्थिक मदद देना।
6. अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संकट अदायगी के समय असन्तुलन की मात्रा और अवधि को कम करना।
7. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का विस्तार, रोजगार और विकास के उच्च स्तर को प्राप्त करना।

संरचना

इसका प्रबंधन एक बोर्ड ऑफ गवर्नर्स या गर्वनर मंडल द्वारा होता है। प्रत्येक सदस्य देश एक गर्वनर मनोनीति करता है। प्रत्येक देश का एक वैकल्पिक गर्वनर भी होता है, जो मुख्य गर्वनर के न रहने पर उसके बदले मतदान या अन्य कार्य कर सकता है। प्रत्येक गर्वनर को सदस्यता के 250 मत प्राप्त होते हैं, साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष में एक लाख SDR पर अतिरिक्त मत देने का अधिकार है। इस कारण अमीर देशों के मत अधिक होते है, क्योंकि कोष की राशि भी उन्हीं के पास अधिक है। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की समीक्षा की बैठक प्रतिवर्ष होती है।

संसाधन

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के संसाधन प्राप्त करने के प्रमुख स्त्रोत निम्न है -

1. **सदस्यों से प्राप्त अंशदान-** प्रत्येक सदस्य देश के निर्धारित कोष का निर्धारण संबंधित देश के सकल घरेलू आय के अनुसार होता है। इसी आधार पर वह अंशदान करता है। प्रत्येक उत्पाद अर्थव्यवस्था के अन्य मानकों के आधार पर सदस्य का कोटा निर्धारित होता है जिसे स्पेशल ड्राविंग राइट्स अथवा विशेष आहरण अधिकार कहते हैं। संक्षेप में, इसे (एस.डी.आर.) कहा जाता है। एक लाख एस.डी.आर. एक मत के बराबर होता है। अर्थव्यवस्था के आकार से अंशदान तय होते हैं। अपने अंश के आधार पर अमेरिका

प्रथम व जापान व जर्मनी दूसरे स्थान पर हैं। सदस्य राष्ट्रों के कोटों में परिवर्तन उनकी अर्थव्यवस्था के अनुसार होता है।

2. **कर्ज-** सदस्य देश अपने भुगतान संतुलन हेतु IMF से कर्ज ले सकते हैं। यह अल्पकालीन या दीर्घकालीन हो सकते हैं। कर्ज नीतिगत आर्थिक विकास हेतु ही प्राप्त होता है। साथ ही IMF भी विकसित देशों से कर्ज ले सकता है ताकि अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक व्यवस्था पर आये किसी संकट को टाला जा सके। 11 अति विकसित देश आवश्यकता पड़ने पर IMF को कर्ज देने के लिए वचनबद्ध हैं।

भारत एवं अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष

भारत का मुद्रा कोष से अच्छे व घनिष्ट संबंध रहे हैं। भारत ने सदैव नीति निर्माण व संचालन में मुद्रा कोष को सहयोग दिया है। भारत IMF के वित्त पोषक देशों में एक है। भारत का वित्त मंत्री मुद्रा कोष के गवर्नर में मंडल में पदेन गवर्नर होता है तथा RBI दूसरा वैकल्पिक गवर्नर होता है। 1970 तक भारत के आधार अंशदान पर प्रथम पांच देशों में था। भारत अब 13वें स्थान पर है। भारत समय-समय पर अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से ऋण विभिन्न परियोजनाओं के सम्पादन हेतु लेता रहा है। कोष के नीति निर्माण व प्रशिक्षण कार्यों में भारत ने हमेशा सहयोग किया है। यद्यपि 2006 में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की बैठक में चार देशों के निर्धारित कोटे में वृद्धि का निर्णय लिया गया। इनमें चीन, मैक्सिको, दक्षिण कोरिया व टर्की है। उक्त राष्ट्रों के कोटे में वृद्धि से भारत का सापेक्षित कोटा 1.95 से घटकर 1.91 प्रतिशत रह गया है। भारत सहित कुल 23 देशों ने इस प्रस्ताव का विरोध किया था।

मूल्यांकन

कोष में देशों का स्थान उनकी अर्थव्यवस्था के अनुरूप है। अतः अमीर देशों का प्रभुत्व कोष में स्पष्ट दिखाई देता है। यद्यपि कोष ने अंशदान के पुनरीक्षण का प्रस्ताव रखा है। जिसका लाभ विकासशील देशों को होगा। 2003 के आंकड़ों के अनुसार कोष 14 सदस्य देशों को आरक्षित सुविधा, उदेशो को विस्तारित सुविधा तथा 36 निर्धन देशों को गरीबी हटाने व विकास करने की सुविधा दे रहा है। अपनी वित्तीय स्थिति में सुधार के लिए कोष का अपने जमा स्वर्ण भंडार में से कुछ भाग बेचने का भी अधिकार है। इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और आर्थिक विकास में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का महत्वपूर्ण स्थान बन गया है।

सारांश

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एक अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक संगठन है, जिसके सदस्य देश 184 हैं। इसमें राज्यों की शक्ति निर्धारित कोटे के आधार पर होती है, जो राज्य की अर्थव्यवस्था तथा अन्य मानकों के अनुरूप है। अतः अमीर देशों को अधिक संख्या में मताधिकार होने से इसकी नीतियां भी विकसित देशों के अनुसार और विकासशील देशों के प्रतिकूल है।

यहां विचारणीय यह भी है कि गरीब और कर्ज़दार देशों को कोष की नीतियों व शर्तों का पालन करना पड़ता है। लेकिन इन नीतियों के दुष्परिणामस्वरूप विकासशील देश अपने अनुदान कम करने, मुद्रा का अवमूल्यन करने तथा अर्थव्यवस्था का निजीकरण करने को बाध्य हो रहे हैं। ब्याज व उधार कोष को लौटाने के बाध्यकारी नियमों से कर्ज़दार देशों में उत्पादन में कमी व बेरोजगारी भी बढ़ी है। इसका विरोध विकासशील देश करते हैं। भारत में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष की विवादास्पद नीतियों पर तीखी बहस चल रही है।

बोध प्रश्न

1. अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष क्या है?

....

....

....

2. अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के उद्देश्य क्या हैं?

....

....

....

3. ब्रिटेन वुड्स व्यवस्था क्या थी?

....

....

....

4. अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के संसाधनों के प्रमुख स्त्रोत क्या है?

....

....

....

17.4 विश्व व्यापार संगठन

गैट (तटकर और व्यापार पर आम समझौता) की स्थापना 1947 में की गयी थी। यह 1948 से प्रभावशाली हुआ। लेकिन गैट की व्यवस्था से भी अधिक उदार और प्रतिबंध रहित अर्थव्यवस्था विकसित देशों और भूमंडलीकरण की मांग थी। फलस्वरूप गैट को ही परिवर्तित कर 1995 में 123 देशों ने हस्ताक्षर करके विश्व व्यापार संगठन अथवा WTO की स्थापना की और आज यह विश्व का सबसे प्रभावशाली आर्थिक संगठन है, जिसकी सदस्य संख्या 26 जून 2014 के आंकड़े के अनुसार 160 है।

प्रमुख सिद्धांत

इसके प्रमुख सिद्धांत निम्नलिखित हैं-

1. आन्तरिक उद्योग की सुरक्षा हेतु तटकर।
2. तटकरों की सीमा का निर्धारण।
3. सर्वाधिक समर्थिक राष्ट्र का दर्जा (M.N.F)
4. राष्ट्रीय समानता का सिद्धांत।

विश्व व्यापार संगठन : संरचना एवं गठन

WTO की सर्वोच्च इकाई मंत्री स्तरीय सम्मेलन है, जिसकी बैठक दो वर्ष के अन्तराल में होती है। एक महासभा भी है जिसके सभी सदस्य देश सदस्य है। जनरल कॉन्सिल या सामान्य परिषद के अधीन अलग-अलग तीन परिषदें बनाई गई हैं।

1. वस्तु व्यापार की परिषद।

2. सेवा व्यापार की परिषद।

3. व्यापार सम्बद्ध बौद्धिक सम्पदा अधिकारों की परिषद NH निर्णय प्रक्रिया NDWTO में निर्णय सर्व सहमति से होते हैं किन्तु मत भिन्नता की स्थिति में एक देश एक मत का सिद्धान्त मान्य है, निर्णय बहुतमत से होते हैं।

सम्बद्ध समितियां 1. विवाद निवारण समिति।

ND इसमें दो समितियां है- 2. व्यापार नीति समीक्षा समिति।

सचिवालय

स्विट्ज़रलैण्ड के जेनेवा में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का मुख्यालय है। संगठन का प्रधान महानिर्देशक होता हैं, जिसके सहयोग हेतु चार उप निर्देशक होते है, जिनकी नियुक्ति महानिर्देशक सदस्य देशों की अनुशंसा पर करता है। सचिवालय में 500 के करीब कर्मचारी नियुक्त हैं। सचिवालय का कार्य है-

1. पूर्ण रोजगार की प्राप्ति सुनिश्चित करना जिससे जीवन स्तर ऊँचा उठ सके।

2. वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन और व्यापार का प्रसार करना।

3. वैश्विक संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग कर सतत् विकास को बढ़ावा देना जिससे पर्यावरण सुरक्षित रह सके।

4. विकासशील देशों के आर्थिक विकास को प्रोत्साहन देना जिससे वे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में न्यायोचित भाग प्राप्त कर सकें।

5. आयात-निर्यात व व्यापार की बाधाओं को दूर करना जिससे वैश्विक व्यापार को बढ़ावा मिले।

6. विश्व स्तरीय बहुपक्षीय सुसंगठित व्यापार व्यवस्था को विकसित करना।

विश्व व्यापार संगठन : कार्य

1. विश्व व्यापार संगठन द्विपक्षीय और बहुपक्षीय व्यापार समझौता के क्रियान्वयन, प्रबंधन और संचालन में सहायता करता है।

2. यह नागरिक, विमानन, दुग्धोत्पाद, मांस व्यापार, सरकारी खरीदी आदि की व्यवस्था सुनिश्चित करता है। बहुपक्षीय समझौते हेतु नीति निर्माण और उचित ढांचे की व्यवस्था करता है, जिससे उक्त समझौतों का परिपालन हो सके।

3. यह मंत्री स्तरीय सम्मेलन द्वारा स्वीकृत समझौतों बहुपक्षीय व्यापारिक निर्णयों वार्ताओं के संचालन हेतु एक मंच प्रदान करता है।

4. यह सदस्य देशों के मध्य उत्पन्न व्यापार सम्बंधी विवादों के हल हेतु सकारात्मक प्रयास करता है।

5. यह सदस्य देशों की राष्ट्रीय व्यापार नीतियों की समीक्षा व निगरानी करता है, ताकि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन के शर्तों के प्रतिकूल निर्णय न हो सके। इसलिए इसे विश्व का पुलिसमैन कहा जाता है।

6. अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व वित्तीय नीति निर्धारण से जुड़ी अन्य अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संस्थाओं से सहयोग करता है।

विश्व व्यापार समझौता

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन का पूर्व संगठन गैट सिर्फ वस्तुओं के व्यापार से संबंधित नियम ही बनाता था। कृषि क्षेत्र भी इससे बाहर था। लेकिन उदारीकरण और वैश्वीकरण के समर्थक इसके कार्य क्षेत्र को बढ़ाना चाहते थे, फलस्वरूप उरूग्वे वार्ता में चार नये क्षेत्र वार्ता सूची में रखे गये-

1. व्यापार से संबंधित निवेश उपाय (TRIMS)
2. बौद्धिक सम्पदा अधिकार के पहलुओं से संबंधित व्यापार (TRIP)
3. सेवाओं में व्यापार।
4. कृषि।

यद्यपि चारों क्षेत्र किसी भी अर्थव्यवस्था के आधारभूत क्षेत्र हैं। अतः विकासशील देश सभी क्षेत्रों को व्यापार हेतु खोलना नहीं चाहते थे। वे सिर्फ वस्तु व्यापार के नियम बनाने तक ही संगठन का सीमित रखना चाहते थे। किन्तु विकसित देशों के हित भिन्न थे। वे चाहते थे कि राष्ट्रीय सीमाएं शिथिल हो और उनके लिए विकासशील देशों के बाजार खोल दिये जाएं। क्योंकि वे प्रतिस्पर्धा में आगे थे और विकासशील देशों के घरेलू उद्योग उनके सामने टिक नहीं सकते थे। अतः विकासशील देशों ने इन व्यापार नियमों को कड़ा विरोध किया।

डंकल प्रस्ताव

उक्त विरोध को देखते हुए गैट के तत्कालीन महानिदेशक आर्थर डंकल (Arthur Dunker) ने 1991 में अपना 500 पृष्ठ का प्रस्ताव रखा। सदस्य देशों को इस पर हस्ताक्षर करने के लिए जनवरी, 1992 तक का समय दिया था। लेकिन उक्त प्रस्ताव का भी विरोध हुआ। क्योंकि वह सिर्फ व्यापार नहीं, सेवा व कृषि क्षेत्र तक विस्तृत था। सर्वाधिक विरोध पेन्टेट नियमों का हुआ जो विकसित देशों को और धनी तथा विकासशील देशों को और आर्थिक बोझ बढ़ाने वाला था। उरूग्वे दौर की वार्ताओं में इसका समस्या के हल के प्रयास हुए।

विश्व व्यापार संगठन : आधारभूत समझौते

गेंट को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन का स्वरूप देने के लिए निम्न समझौते किये गये-

1. वस्तुओं के व्यापार के संदर्भ में बहुपक्षीय समझौता।
2. सेवाओं के व्यापार के संदर्भ में सामान्य समझौता।
3. बौद्धिक सम्पदा व्यापार पर समझौता

4. विवादों के समाधान हेतु नियमों, प्रक्रियाओं पर समझौता।

5. बहुपार्श्विक व्यापार समझौते।

6. व्यापार नीति समीक्षा एवं पुनरावलोकन तंत्र।

इस प्रकार करीब 60 छोटे-बड़े समझौतों द्वारा विश्व व्यापार संगठन को वर्तमान स्वरूप दिया गया जो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए आधारभूत नियम बनाये हैं। आज विश्व व्यापार संगठन सर्वाधिक प्रभावशाली आर्थिक संगठन बन गया है।

विश्व व्यापार संगठन : मंत्री स्तरीय सम्मेलन

विश्व व्यापार संगठन के नीति निर्धारक की प्रक्रिया मंत्री स्तरीय सम्मेलनों में होती है। यह सम्मेलन प्रत्येक दो वर्ष बाद होता है। अभी तक 9 सम्मेलन आयोजित किये जा चुके हैं-

विश्व व्यापार संगठन, मंत्री स्तरीय सम्मेलन

सम्मेलन क्रम	वर्श	स्थान
पहला	1996	सिंगापुर
दूसरा	1998	जेनेवा
तीसरा	1999	सिएटल
चौथा	2001	दोहा
पांचवा	2003	कानकुन
छठवा	2005	हांगकाग
सातवां	2009	जेनेवा
आठवां	2011	जेनेवा
नौवा	2013	बाली, इण्डोनेशिया

वर्तमान युग में आर्थिक विकास चूकि सर्वोच्च मुद्दा है अतः विश्व व्यापार संगठन की मंत्री स्तरीय बैठक महत्वपूर्ण होती जा रही है। यद्यपि ज्यादातर सम्मेलनों में विकसित और विकाशील देशों के मध्य मतभेद की स्थिति दिखाई देती है। क्योंकि औद्योगिक और विकसित देशों के हित अधिक प्रभावी रहते है। वे वस्तु सेवा वे पूंजी प्रवाह के हिमायमती हैं जिनकी उनके पास बहुलता है। लेकिन वे श्रम के वैश्विक प्रवाह को बढ़ावा नहीं देते जिनकी बहुतायत विकासशील देशों के पास है। साथ ही पेटेन्ट और बौद्धिक सम्पदा अधिनियम भी विकासशील देशों के प्रतिकूल हैं।

पर्यावरण संरक्षण और सतत् विकास के अन्तर्गत बनाये गये नियमों से भी विकासशील देश सन्तुष्ट नहीं है, इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन की मंत्री स्तरीय बैठक उत्तर-दक्षिण संवाद का प्रमुख मंच बन गई है।

भारत एवं विश्व व्यापार संगठन

भारत 1947 से GATT का तथा 1995 से WTO का संस्थापक सदस्य रहा है भारत ने सभी आधारभूत समझौतों पर हस्ताक्षर किये हैं। WTO के प्रावधानों को लेकर भारत की चिन्ता के निम्न कारण हैं-

1. TRIMS के अन्तर्गत किये गये प्रावधान विकसित देशों के हितों में से भारत के प्रतिकूल हैं।

2. सेवा व्यापार क्षेत्र में 11 क्षेत्र सम्मिलित हैं, लेकिन अन्य विकासशील देशों की भांति भारत प्रतिस्पर्धा में सक्षम नहीं है। साथ ही सेवा क्षेत्र में विकसित देशों के राष्ट्रीय मापदण्ड बड़ी बाध है।

3. TRIPS बोद्धिक सम्पदा अाधिकारों पर समझौते के अन्तर्गत सात प्रकार की बौद्धिक सम्पदा है। इसके प्रावधान औद्योगिक व विकसित देशों के पक्ष में है। अविष्कार करने वाले देशों को पेन्टेट के माध्यम से उपयोग करने वाले देश सदैव शुल्क देते रहेंगे।

4. भारत की बड़ी चिंता कृषि क्षेत्र को लेकर है, जहाँ प्रतिस्पर्धा वैश्विक होने पर भारतीय कृषकों को नुकसान हो सकता है

5. 2003 से उत्पाद पेन्टेट लागू होने से भारत में दवाइयों की कीमत में 25 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि का अनुमान है।

6. बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और विकसित देशों द्वारा भारत के बीज उत्पादन पर प्रभुत्व की आशंका निरन्तर है। क्योंकि बीजो और पौधों में सामान्य परिवर्तन के बाद अपने नाम से विकसित देश पेन्टेट करा सकते हैं, जिससे भारत की सम्पन्न जैविक विविधता पर अधिकार किया जा सकता है।

यद्यपि कृषि, पर्यटन, वस्त्र उद्योग और सेवा क्षेत्र में भारत की संभावनाएं आपार है, और इसलिए कुछ आशावादी स्वर भी सुनाई देते है। यद्यपि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन के प्रावधानों में विकासशील देशों के हितों की रक्षा को लेकर भारत से बड़ी आशाएं है, लेकिन भारत और ब्राजील के प्रयासों के बाद भी उतने सशक्त निर्णय नहीं करवा पाये जैसी G-20 के देशों को आशा थी।

मूल्यांकन

विश्व व्यापार संगठन की स्थापना से नई आर्थिक विश्व व्यवस्था दृष्टिगत हुई है। वैश्विक आर्थिक नियमों को कानूनी सुरक्षा प्राप्त हुई है। विश्व बैंक व अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को सदस्य देशों के आन्तरिक मामले में हस्तक्षेप कों कानूनी अधिकार नहीं है, जो विश्व व्यापार संगठन के पास है। इससे यह अत्यधिक शक्तिशाली आर्थिक संगठन बन गया है। विश्व व्यापार संगठन के प्रभाव से विश्व की आर्थिक व्यवस्था में एकरूपता आ रही है। उदारीकरण, भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया तेज हुई है। आर्थिक विकास भी बढ़ा है, पर अमेरिका और अन्य औद्योगिक देशों की प्रभुता भी विकासशील देशों के लिये संवाद का बड़ा मुद्दा है, राष्ट्रीय WTO का विरोध भी करते हैं। इसे राज्यों की सम्प्रभुता के लिए खतरा भी मानते हैं। लेकिन वर्तमान में सभी अर्थव्यवस्थाएं एक-दूसरे पर इतनी आश्रित हैं कि इस वैश्विक संगठन का सदस्य बने बिना अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में सम्मिलित होना संभव नहीं है।

17.5 सारांश

WTO विशव का सबसे बड़ा आर्थिक संगठन है, जिसका उद्देश्य वैश्विक व्यापार के समान नियमों का निर्माण व क्रियान्यन करना है। साथ ही सतत् विकास और पर्यावरण संसक्षण भी इसके उद्देश्य हैं। WTO के वर्तमान में 160 देश हैं। इसे कानूनी शक्ति प्राप्त है। इसके अन्तर्गत वस्तु, सेवा बौद्धिक सम्पदा और कृषि इन चार क्षेत्रों में आधारभूत समझौते किये गये है जिससे उदारीकरण औरनिजीकरण बढ़ा है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां शक्तिचार हुई हैं। इसके प्रावधानों को लेकर विकसित व विकासशील देशों में चर्चा जारी है।

बोध प्रश्न :

1. विश्व व्यापार संगठन के उद्देश्य क्या है?

   ....

   ....

   ....

2. विश्व व्यापार संगठन के आधारभूत समझौते कौन से हैं?

   ....

   ....

   ....

3. भारत एवं विश्व व्यापार संगठन पर टिप्पणी लिखिए?

   ....

   ....

   ....

17.6 शब्दावली

1. पुनर्वलोकन- फिर से देखा, पुनः समीक्षा करना।
2. सर्वाधिक समर्थिक राष्ट्र का दर्जा सभी देश एक-दूसरे से समानता या भेदभाव रहित व्यापार रखेंगे।
3. बहुपक्षीय-दो से अधिक पक्षों के मध्य।

इकाई-18

क्षेत्रीय संगठन : यूरोपीय समुदाय, आसियान, एपेक, सार्क (दक्षेस) ओ0आई0सी0 तथा ओ0ए0यू0

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 यूरोपीय समुदाय

18.2.1 उद्भव, उद्देश्य

18.2.2 संरचना एवं संस्थाएँ

18.2.3 विश्व राजनीति में भूमिका

18.3 दक्षिण पूर्व एशियाई राष्ट्र संघ (आसियान)

18.3.1 लक्ष्य एवं उद्देश्य

18.3.2 संरचना एवं कार्य

18.3.3 भूमिका

18.4 एशिया प्रशांत आर्थिक सहयोग परिषद (एपेक)

18.5 दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संघ (दक्षेस)

18.5.1 उद्देश्य

18.5.2 संरचना एवं कार्य

18.5.3 भूमिका एवं सम्भावनाऐं

18.6 इस्लामिक सम्मेलन संगठन (ओ.आई.सी.)

18.6.1 उद्देश्य एवं कार्य

18.6.2 संरचना एवं भूमिका

18.7 अफ्रीकी एकता संगठन (ओ.ए.यू.)

18.7.1 उद्देश्य

18.7.2 संरचना

18.7.3 भूमिका एवं कार्य

18.8 सारांश

18.9 शब्दावली

18.10 सम्बन्धित प्रश्न

18.11 संदर्भ ग्रंथ

18.0 उद्देश्य

वर्तमान युग संगठनों का युग है, विज्ञान और तकनीक से सिमटती दुनिया ने परस्पर निर्भरता में वृद्धि की है, राष्ट्रीय सीमाएं शिथिल हो रही हैं और न सिर्फ अन्तर्राष्ट्रीय बल्कि क्षेत्रीय सहयोग संगठनों की संख्या और प्रभाव में वृद्धि हो रही है। इस इकाई में आप इसी विषय पर चर्चा की गयी है। इसका उद्देश्य है-

1. क्षेत्रीय संगठनों के उद्‌भव व विकास को समझाना।
2. अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में क्षेत्रीय संगठनों की प्रभावी भूमिका का अध्ययन करना।
3. क्षेत्रीय संगठनों की प्रासंगिकता और उनके भविष्य की संभावनाओं पर प्रकाश डालना।

18.1 प्रस्तावना

क्षेत्रीय संगठनों के उद्‌भव के मुख्य कारक हैं, समान आर्थिक हित तथा समान इतिहास, संस्कृति और भूगोल अन्तर्राष्ट्रीय जगत में प्रभाव डालने के लिए भी क्षेत्रीय संगठन हैं जैसे-जैसे निजीकरण, उदारीकरण के कारण आर्थिक हित महत्वपूर्ण हुए हैं, समान आर्थिक सोच, साझा बाजार जैसे आर्थिक हितों पर आर्थिक क्षेत्रीय संगठनों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। इस अध्याय में प्रमुख क्षेत्रीय संगठनों पर प्रकार डाला गया है।

18.2 यूरोपीय समुदाय

इसे यूरोपीय संघ, यूरोपीय साझा बाजार, यूरोपीय आर्थिक समुदाय आदि नामों से भी जाना जाता है, द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् ध्वस्त यूरोप की आर्थिक स्थिति सुधार करने के उद्‌देश्य से 6 देशों की पहल ने आज इस विश्व का सबसे प्रभावशाली क्षेत्रीय संगठन बना दिया है। वर्तमान में इसके सदस्य देशों की संख्या 28 हो चुकी है। इसके क्षेत्र में हो रहे विस्तार से इसकी सफलता का परिचय मिलता है।

18.2.1 उद्‌भव, उद्देश्य

यूरोपीय यूनियन की स्थापना इसका पहला कदम था, जब 6 देशों बेल्जियम, फ्रांस, पश्चिमी जर्मनी, इटली और नीदरलैण्ड ने 1952 में पहली बार यूरोपीय कोयला और स्टील

समुदाय का गठन किया था। चूंकि यूरोप द्वितीय विश्व युद्ध के बाद आर्थिक मंदी का शिकार था और खोई प्रतिष्ठा प्राप्त करना चाह रहा था। इसलिए इन 6 देशों के प्रयास को भारी सफलता मिली सदस्य बढ़ते-बढ़ते 1995 तक 15 हो गये। 2004 इस दिशा में अभूत पूर्व सफलता मिली रहा जब एक साथ 10 नये सदस्य इसमें सम्मिलित हुए और सदस्य संख्या 25 हो गई। धीरे-धीरे वस्तु, व्यक्ति, सेवा और पूंजी के अबाध प्रवाह ही सम्मति बनने से विकास की गति बढ़ी। वैश्विक स्पर्धा में इस समुदाय को सफलता मिली और अब 2007 में बुल्गारिया और रोमानिया की सदस्यता के साथ सदस्य देशों की संख्या 28 हो गई है।

यूरोपीय संघ के सदस्य

वर्तमान सदस्य (28) - आस्ट्रिया, बेल्जियम, डेनमार्क, फिनलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, ग्रीस, रिपब्लिक ऑफ आयरलैण्ड, इटली, लक्जेनबर्ग, नीदरलैण्ड, पुर्तगाल, स्पेन, स्वीडन, यूनाइटेड स्टेट, लातविया, लिथुआनिया, एस्टोनिया, पोलैण्ड, हंगरी, चैक गणराज्य, स्लोवाकिया, स्लोवेतिया, माल्टा, साइप्रस, बुल्गारिया, रूमानिया, क्रोएशिया (2013)

उद्‌देश्य :- यूरोपीय समुदाय के उद्‌देश्य निम्नानुसार है -

1. उन सभी विवादों को, जो यूरोप में अशांति फैलाते हैं या मतभेद उत्पन्न करते हैं, समाप्त करना।
2. यूरोप को विश्व में पुनः प्रतिष्ठित करना। इस हेतु आर्थिक शक्ति में वृद्धि करना और सांस्कृतिक परम्परा को समृद्धि प्रदान करना।
3. यूरोप के लोगों के रहन-सहन के स्तर में सुधार करना और बेहतर कार्य प्रणाली का विकास करना।
4. यूरोप के पुराने छोटे-छोटे बाजारों को समाप्त कर राष्ट्रीय सीमाएं शिथिल कर, समान व्यापारिक और आर्थिक नियमों द्वारा एक बड़े बाजार का निर्माण करना जो विश्व व्यापार में प्रतिस्पर्धा कर सके।
5. आपसी सहयोग से तकनीकी विकास द्वारा यूरोपीय उद्योगों का विकास करना।
6. भविष्य हेतु एक सशक्त यूरोपीय संघ बनाना जो आर्थिक व राजनीतिक स्तर पर सशक्त हो।

18.2.2 संरचना एवं सस्थाएँ

यूरोपीय संघ को सशक्त बनाने के लिए 2004 में इसका नवनिर्मित संविधान लागू किया गया है। इन संविधान को 2007 तक लागू करने की योजना थी पर अभी तक 10 देशों की सरकारों ने ही इस पर सहमति दी है।

यूरोपीय संघ में निम्न संस्थाएँ हैं :-

1. **यूरोपीय आयोग-** इसके सदस्यों की संख्या 25 है, जिनका निर्वाचन सदस्य राज्य करते हैं। इसके सदस्यों का कार्यकाल 5 वर्ष है इसका उद्‌देश्य यूरोपीय संघ के संविधान तथा यूरोपीय एकता के लिए की गई संधियों और प्रावधानों का संरक्षण करना है। इसका मुख्यालय ब्रुसेल्स में है।

2. **यूरोपीय परिषद-** इसमें सदस्य राज्यों में मंत्री सम्मिलित होते हैं। यह नीति निर्माण की रूपरेखा बनाती है। यह निर्बाध व्यापार, आर्थिक विकास के सहयोग हेतु संघीय कानून बनाती है। यह प्रावधानों को लागू करने के लिए सदस्य राज्य की सरकारों से मदद ले सकती है। हर 6 माह में अध्यक्ष बदलता है और नये अध्यक्ष के चुनाव के समय सदस्य राज्यों का शिखर सम्मेलन भी होता है।

3. **यूरोपीय संसद-** इसका गठन 1999 में किया गया। इसकी सदस्य संख्या 732 है, जो सदस्य राज्यों के द्वारा 5 वर्ष के लिए चुनकर आते हैं, यह राजनीतिक समूह का निर्माण करते हैं। यहां यूरोपीय एकता एवं सार्वजनिक हित के मसलों पर बात होती है। इसे यूरोपीय संघ के बजट को पारित करने एवं अस्वीकार करने का भी अधिकार है। यह संघ की दिशा देने एवं विकास हेतु प्रयास करती है।

4. **द कोर्ट ऑफ जस्टिस-** इसका गठन 1989 में किया गया। इसमें 25 न्यायाधीश व 8 महाधिवक्ता होते हैं। इसके निर्णय बाध्यकारी हैं। इसका मुख्य कार्य संधियों और प्रावधानों को लागू करवाना एवं उत्पन्न विवादों का निपटारा करना है।

5. **कोर्ट ऑफ आडीटर्स-** 1975 से लागू इस संस्था के सदस्य 15 हैं। इसका उद्देश्य वित्तीय क्रियाकलापों का लेखांकन एवं लेखा परीक्षण करना है। यह बजट को प्रमाणित करता है। कुल मिलाकर इसका कार्य आर्थिक लेन-देन में पारदर्शिता रखना है। इसका मुख्यालय लक्जमबर्ग में है।

यूरो जोन- 1991 में आर्थिक प्रतिस्पर्धा से निपटने के लिए मास्ट्रिश्च नीदरलैण्ड में 12 राष्ट्रों ने यूरोपीय समुदाय में सम्मिलत सभी देशों के लिए समान मुद्रा चलाने की सहमति जतायी। इसी आधार पर 2002 से यूरो मुद्रा का चलन शुरू हुआ। अभी तक 15 राज्यों ने इसे स्वीकार किया है इन्हें यूरो जोन कहा जाता है। ब्रिटेन, स्वीडन, डेनमार्क इसमें सम्मिलित नहीं है वह इसे अपने राष्ट्रीय हित व सम्प्रभुता पर प्रहार मान रहे हैं।

भारत एवं यूरोपीय संघ- भारत के यूरोपीय संघ से अच्छे सम्बन्ध हैं। भारत के कुल निर्यात का 19 प्रतिशत यूरोपीय संघ को जाता है, भारत व यूरोपीय संघ में सम्बन्ध दो आधार पर हैं - 1. व्यापार सहयोग 2. विकास सहायता

भारत एवं यूरोपीय संघ - शिखर सम्मेलन

क्र.	**स्थान**	**वर्श**
प्रथम	लिस्बन	2000
द्वितीय	नई दिल्ली	2002
तृतीय	कोपेनहेगन	2002
चतुर्थ	नई दिल्ली	2003
पंचम	द हेग	2004
पष्ठम	नई दिल्ली	2005
सप्तम	हेल सिंकी (फिनलैण्ड)	2006
अष्ठम	नई दिल्ली	2007
दसवां	नई दिल्ली	2009

भारत यूरोपीय संघ का सबसे बड़ा व्यापार साझीदार है और यूरोपीय संघ से भारत के रिश्ते बहुत अच्छे हैं।

भूमिका और भविष्य- पिछले चार दशकों में यूरोपीय संघ के सदस्यों और प्रभाव में व्यापक वृद्धि हुई है नये राज्य इसकी सदस्यता लेने हेतु आतुर हैं। इसने न सिर्फ आर्थिक क्षेत्र में बल्कि राजनीति क्षेत्र में भी समरूपता लाने में सफलता प्राप्त की है। विश्व की एक ध्रुवीकरण से बहुध्रुवीयकरण की प्रक्रिया में यूरोपीय संघ भी विश्व राजनीति का एक सशक्त केन्द्र बन गया है। आशा तो यह है कि आर्थिक क्षेत्र में उपलब्धि के बाद भविष्य में यह एक राजनीतिक शक्ति के रूप में 'संयुक्त राज्य यूरोप' में बदल जाए और महाशक्ति के रूप में उभरकर अमेरिकी प्रभुत्व को चुनौती दे सकता है साथ ही शक्ति संतुलन में भी सहायक हो सकता है।

18.3 दक्षिण पूर्व एशियाई राष्ट्र संघ (आसियान)

आसियान दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों का संगठन है। 8 अगस्त, 1967 को इसका गठन बैंकाक घोषणा द्वारा हुआ। इसके पांच प्राथमिक सदस्य थे, इण्डोनेशिया, फिलीपीन्स, मलेशिया, सिंगापुर तथा थाईलैण्ड। 1999 में इसकी सदस्य संख्या 10 हो गई। उक्त पाँचों के अतिरिक्त ब्रुनेई, वियतनाम, लाओस, म्यांमार एवं कम्बोडिया भी इसके सदस्य हैं, यह पूर्णतः असैनिक संगठन है।

18.3.1 लक्ष्य एवं उददेश्य

आसियान के घोषणा पत्र में सात उददेश्य शामिल हैं -

1. समानता और सहभागिता द्वारा समृद्ध और शांतिपूर्ण दक्षिण पूर्व एशियाई राष्ट्र संघ का निर्माण करना, जिससे आर्थिक विकास, सामाजिक व सांस्कृतिक उन्नति को बढ़ावा मिले।

2. सदस्य देशों के मध्य न्याय व विधि के शासन के प्रति आस्था जगाना और इस हेतु घोषणा पत्र के सिद्धातों का अनुपालन करना।

3. आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, प्रशासनिक, तकनीकी एवं वैज्ञानिक क्षेत्रों मे साझेदारी कर पारस्परिक विश्वास एवं सहयोग में वृद्धि करना।

4. शैक्षणिक, तकनीकी, पेशागत, प्रशासनिक प्रशिक्षण एवं शोध के जरिये एक दूसरे की मदद करना।

5. कृषि के उद्योग, आवागमन के साधन, संचार सुविधाओं में वृद्धि कर लोगों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने के साथ अन्तर्राष्ट्रीय वस्तु व्यापार की समस्याओं का हल करना।

6. दक्षिण पूर्व एशियाई शिक्षा व तकनीक को बढ़ावा देना।

7. अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ाना। समान उददेश्यों वाले दूसरे क्षेत्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों का सहयोग प्राप्त करना।

18.3.2 संरचना एवं कार्य

संरचना निम्नानुसार है-

1. **शिखर सम्मेलन**:- यह आसियान का सर्वोच्च सम्मेलन प्रत्येक सदस्य राज्य के राष्ट्राध्यक्ष भाग लेते हैं। 2011 तक आसियान के 16 शिखर सम्मेलन हो चुके हैं।
2. **मंत्री मंडल सम्मेलन**:- यह विदेश मंत्रियों की वार्षिक बैठक है और प्रत्येक सदस्य देश में क्रमशः आयोजित की जाती है।
3. **सचिवालय**:- इसका सचिवालय जकार्ता (इण्डोनेशिया) में है। महासचिव का पद प्रति दो वर्ष के लिए चुनाव के आधार पर दिया जाता है, जबकि अध्यक्ष वर्ण माला के क्रमानुसार चुना जाता है।
4. **अन्य स्थायी समितियां**:- इसके कार्य का सफलता पूर्वक संचालित करने के लिए स्थायी समितयों का गठन किया जाता है। ये स्थायी समीतियां हैं- 1. व्यापार एवं पर्यटन, 2. उद्योग खनिज तथा ऊर्जा, 3. आहार, कृषि व वन सम्पदा, 4. यातायात व संचार, 5. वित्त व बैंकिग, 6. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, 7. सामाजिक विकास, 8. संस्कृति एवं सूचना, 9 बजट।

भारत एवं आसियान- भारत आसियान में 1996 से पूर्ण वार्ताकार देश है। भारत और आसियान के मध्य 2004 में एक ऐतिहासिक समझौता हुआ, जिसके तहत भारत व आसियान के व्यापार को 2007 तक 30 अरब डॉलर तक बढ़ाने पर सहमति हुई। साथ ही रेल, सड़क, जल यातायात, वायु यातायात में विस्तार व आपसी पर्यटन को बढ़ावा देने की योजना है। साथ ही दोनों के मध्य अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद से निपटने की दृढ़ इच्छा शक्ति भी दर्शाई गई। इस हेतु 18 सूत्रीय दस्तावेज जारी किया गया। इस प्रकार भारत ने आसियान देशों से बेहतर सम्बन्ध बनाने की नीति अयनायी हुई है।

18.3.3 भूमिका

अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिए दोनों के मध्य मुक्त व्यापार क्षेत्र बनाने की योजना पर सहमति हुई है। आसियान के माध्यम से इस क्षेत्र की अनेक महत्वाकांक्षी परियोजनाऐं चल रही हैं। भारत के अतिरिक्त चीन, जापान, अमेरिका और यूरोपीय संघ भी पूर्ण वार्ताकार देश हैं। इससे विश्व व्यापार में आसियान के बढ़ते प्रभाव को आंका जा सकता है। इसने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, प्रशासनिक, वैज्ञानिक क्षेत्रों में व्यापक सहयोग व सक्रियता दिखाई है। पर्यटन विकास हेतु 'आसियान' सामूहिक संगठन बना जिससे सदस्य राज्यों के नागरिक बिना वीजा के अन्य आसियान देशों में भ्रमण कर सकते हैं, लेकिन यूरोपीयन संघ की तुलना में आसियान की प्रगति धीमी रही है। सदस्य देशों के मध्य विवाद और संसाधनों का अभाव इसके प्रमुख कारण हैं। दूसरा कारण पश्चिम देशों का हस्तक्षेप भी रहा है, जिससे यह अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं कर सका है फिर भी इस क्षेत्र को मुक्त व्यापार क्षेत्र बनाने के लिए यह संगठन प्रयासरत है।

18.4 एशिया प्रशांत आर्थिक सहयोग परिषद (एपेक)

एपेक की स्थापना 1989 में तत्कालिक आस्ट्रेलियाई प्रधानमंत्री बोब होक की पहल पर हुई थी। इसकी स्थापना में आसियान देशों ने भी भाग लिया था। इसके सदस्य देशों का संयुक्त

व्यापार, विश्व के कुल व्यापार का 40 प्रतिशत है। एपेक को स्वतंत्र व्यापार क्षेत्र बनाने के प्रयास जारी हैं। जून, 1992 में बैंकाक की बैठक के बाद सिंगापुर में इसके सचिवालय की स्थापना की गई है।

1998 में रूस, वियतनाम व पेरू को सदस्यता मिल जाने के बाद एपेक की सदस्य संख्या 21 हो गई है। अन्य सदस्यों में आस्ट्रेलिया, अमेरिका, कनाडा, मैक्सिको, जापान, चीन, हॉगकांग, ताइवान, दक्षिण कोरिया, इण्डोनेशिया, ब्रुनेई, फिलीपीन्स, सिंगापुर, मलेशिया, थाईलैण्ड, पपुआ न्यू गिनी, न्यूजीलैण्ड, चिली, पेरू, रूस तथा वियतनाम हैं। भारत अभी इसका सदस्य नहीं है।

एपेक के शिखर सम्मेलन

वर्श		दिनांक	देश	शहर
1989	1	6-7 नवम्बर	ऑस्ट्रेलिया	कैनबरा
1990	2	29-31 जुलाई	सिंगापुर	सिंगापुर
1991	3	12-14 नवम्बर	दक्षिण कोरिया	सियोल
1992	4	10-11 सितम्बर	थाईलैंड	बैंकाक
1993	5	19-20 नवम्बर	अमेरिका	सिएटल
1994	6	15-16 नवम्बर	इंडोनेशिया	Bogar
1995	7	18-19 नवम्बर	जापान	ओसाका
1996	8	24-25 नवम्बर	फिलीपींस	सुबिक
1997	9	24-25 नवम्बर	कनाडा	वैंकूवर
1998	10वीं	17-18 नवम्बर	मलेशिया	क्वालालंपुर
1999	11वीं	12-13 सितम्बर	न्यूज़ीलैंड	ऑकलैंड
2000	12वीं	15-16 नवम्बर	ब्रुनेई	बंदर सेरी बेगावान
2001	13वीं	20-21 अक्टूबर	चीन	शंघाई
2002	14	26-27 अक्टूबर	मेक्सिको	लॉस Cabos
2003	15	20-21 अक्टूबर	थाईलैंड	बैंकाक
2004	16	20-21 नवम्बर	चिली	सैंटियागो
2005	17वीं	18-19 नवम्बर	दक्षिण कोरिया	बुसान
2006	18	18-19 नवम्बर	वियतनाम	हनोई
2007	19वीं	08-09 सितम्बर	ऑस्ट्रेलिया	सिडनी
2008	20 वीं	22-23 नवम्बर	पेरू	लीमा

2009	21 वीं	14-15 नवम्बर	सिंगापुर	सिंगापुर
2010	22	13-14 नवम्बर	जापान	योकोहामा
2011	23	12-13 नवम्बर	अमेरिका	होनोलूलू
2012	24	09-10 सितम्बर	रूस	व्लादिवोस्तोक
2013	25	5-7 अक्टूबर	इंडोनेशिया	बाली
2014	26	10-11 नवम्बर	चीन	बीजिंग
2015	27	नवंबर 2015	फिलीर्पीस	मनीला [51]
2016	28	नवंबर 2016	पेरू	लीमा
2017	29	2017	वियतनाम	हनोई
2018	30	2018	पापुआ न्यू गिनी	टीबीए
2019	31	2019	चिली	टीबीए
2020	32	2020	मलेशिया	टीबीए
2021	33	2021	न्यूज़ीलैंड	टीबीए
2022	34	2022	थाईलैंड	टीबीए

सामान्यतः इसका शिखर सम्मेलन प्रतिवर्ष होता है। एपेक 2001 का शिखर सम्मेलन शंघाई में हुआ। यह शिखर सम्मेलन महत्वपूर्ण रहा जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद से निपटने के लिए एक जुटता व हर सम्भव प्रयास करने पर सहमति हुई। यद्यपित सम्मेलन में अमेरिका द्वारा अफगानिस्तान पर हमले का समर्थन नहीं किया गया। इसके अतिरिक्त, 2007 में सिडनी के शिखर सम्मेलन में ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती के लिए समय सीमा 2007 से 2010 कर दी गई। भारत सहित कुल 11 देश इसकी सदस्यता के इच्छुक हैं शेष 10 देश हैं - कोलम्बिया, पनामा, इक्वाडोर, मकाऊ, मंगोलिया, पाकिस्तान, श्रीलंका, कम्बोडिया, लाओस व म्यांमार है। इस प्रकार इसके बढ़ते आकार ने इसे महत्वपूर्ण बना दिया है।

18.5 दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संघ (दक्षेस)

सार्क (दक्षेस) का पूरा नाम दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन या South Association for Regional Co-operation है। इसकी स्थापना 1985 में हुई थी। भारत और पड़ोसी देशों से बना यह संगठन जनसंख्या की दृष्टि से सबसे बड़ा क्षेत्रीय संगठन है। इसका उद्देश्य आपसी विवादों को शांत कर आपसी सहयोग को बढ़ावा देना है। सार्क के गठन की पहल बांग्लादेश के पूर्व राष्ट्रपति श्री जियाउर रहमान ने की थी। संस्थापक देशों की संख्या 7 थी - भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका और मालद्वीप। ये सभी (मालद्वीप को छोड़कर) देश भारतीय प्रायद्वीप के हिस्से हैं, जिनकी सभ्यता, संस्कृति, इतिहास, भूगोल तथा धर्म आदि में व्यापक समानता है। साथ ही इनकी समस्याएं भी एक जैसी हैं। सभी देश गरीबी, अशिक्षा, विकास की समस्या तथा अधिक जनसंख्या की समस्या से पीड़िता हैं, इन देशों में

प्राकृतिक संसाधनों की बहुलता है। अतः उक्त राष्ट्रों का जुड़ना महत्वपूर्ण घटना थी। 2007 मे अफगानिस्तान आठवें सदस्य के रूप में सम्मिलित हुआ है।

18.5.1 उद्देश्य

1. दक्षिण एशियाई देशों के लोगों का कल्याण और उनके उच्च जीवन स्तर में सुधार करना।
2. अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर आपसी सहयोग बढ़ाना तथा सामूहिक आत्मनिर्भरता में वृद्धि करना।
3. दक्षिण एशियाई क्षेत्र में आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक उन्नति में वृद्धि करना। इस हेतु आपसी सहयोग बढ़ाना।
4. एक-दूसरे के समस्याओं के प्रति संवेदनशील रहकर पारस्परिक विश्वास में वृद्धि करना और उनके समाधान के प्रयास करना।
5. सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, तकनीकी व सांस्कृतिक क्षेत्र में सक्रिय सहभागिता और सहायता करना।
6. सामान्य हित वाले मसलो पर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पारस्परिक सहयोग और सामजस्य बनाना।
7. सामान्य लक्ष्यों व हितों वाले अन्य अन्तर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय संगठनों का समर्थन व सहायता करना।

18.5.2 संरचना एवं कार्य

इसके अन्तर्गत मुख्य संस्थाएं कार्यरता हैं-

1. **शिखर सम्मेलन** :- प्रतिवर्ष एक शिखर सम्मेलन आयोजित होता है, जिसमें सभी सदस्य देशों के राष्ट्राध्यक्ष भाग लेते हैं, अभी तक 18 शिखर सम्मेलन हो चुके हैं।

दक्षेस शिखर सम्मेलन

क्र.	वर्श	स्थान
1.	1985	ढाका, बांग्लादेश
2.	1986	नई दिल्ली, भारत
3.	1987	काठमाण्डू, नेपाल
4.	1988	इस्लामाबाद, पाकिस्तान
5.	1990	माले, मालद्वीप
6.	1991	कोलम्बो, श्रीलंका
7.	1993	ढाका, बांग्लादेश

8.	1995	नई दिल्ली, भारत
9.	1997	माले, मालद्वीप
10.	1998	कोलम्बो, श्रीलंका
11.	2002	काइमाण्डू, नेपाल
12.	2004	इस्लामाबाद, पाकिस्तान
13.	2005	ढाका, बांग्लादेश
14.	2007	नई दिल्ली, भारत
15.	2008	कोलम्बो, श्रीलंका
16.	2010	थिम्पू, भूटान
17.	2012	आडुसिटी, मालद्वीप
18.	2014	काठमाडु, नेपाल

2. **मंत्रीपरिषद :** यह सदस्य देशों के विदेश मंत्रीयों की परिषद है। इसकी बैठक प्रत्येक 6 माह में होती है। आपातकाल में इसकी बैठक कभी भी बुलाई जा सकती है। यह संघ की नीति निर्माण, सामान्य हितों पर चर्चा, सहयोग के नये क्षेत्र खोजना जैसे- कार्य सम्पादित करती है।

3. **स्थायी समिति** : यह सदस्य देशों के विदेश सचिवों की परिषद है। इसकी बैठक एक वर्ष में एक बार होना आवश्यक है। पर आवश्यकतानुसार कभी भी बैठक हो सकती है। यह समिति आपसी सहयोग, विज्ञान तकनीकी क्षेत्र में सहयोग एवं प्रशिक्षण, प्राथमिकताओं का निर्धारण जैसे कार्य करती है।

4. **तकनीकी समितियां** : स्वीकृत क्षेत्रों में सहयोग और सामजंस्य के लिये तकनीकी समिति बनाई जाती है, जिसमें सभी देशों के प्रतिनिधि होते हैं।

5. **कार्यकारी समिति** : सदस्य संख्या 8 होती है, प्रयोजन विशेष हेतू बनती है, स्थायी समिति इसका गठन कर सकती है।

6. **सचिवालय** : यह काठमाण्डु में है। इसका महासचिव 2 वर्ष के लिए क्रमशः सभी देशों से मनोनीत होता है। सार्क के सचिवालय को 8 भागों में बांटा गया है। प्रत्येक भाग के अध्यक्ष को निर्देशक कहते हैं।

7. **वित्तीय व्यवस्था** : इस हेतु सदस्य राज्यों से अंशदान लिया जाता है। भारत 32 प्रतिशत, पाकिस्तान 25 प्रतिशत, नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका 11 प्रतिशत एवं भूटान व मालद्वीप को 5 प्रतिशत अंशदान देना पड़ता है।

(SAPTA) साप्टाः इसे दक्षिण एशियाई वरीयता व्यापार समझौता या South Asian Preferential Trading Agreement भी कहते हैं।

साफ्टा (SAFTA) - (South Asian Free Trade Area) या दक्षिण एशियाई मुक्त व्यापार क्षेत्र के विषय में भी सदस्य देशों में सहमति हो गई है। 2006 से दक्षिण एशियाई विकास कोष

SADF प्रभावी हो गया है। आपसी सहयोग व आपदा प्रबंधन के दृष्टिकोण से सदस्य देशों द्वारा बनाया गया यह कोष है।

8.5.3 भूमिका एवं सम्भावनाऐं

साप्टा, साफ्टा, विकास कोष को हम सार्क की उपलब्धि मान सकते हैं, आर्थिक क्षेत्र में इसी उपलब्धि रही है। किन्तु राजनीतिक सांस्कृतिक तथा अन्य क्षेत्रों में यह उतना सफल नहीं रहा है। क्योंकि भारत में लोकतंत्र, श्रीलंका, मालद्वीप तथा पाकिस्तान में तानाशाही, नेपाल, भूटान में राजतंत्र है। चूंकि भारत सबसे बड़ा व सशक्त देश अतः है अन्य राष्ट्र उसके प्रत्येक निर्णय को शंका की दृष्टि से देखते हैं। साथ ही सार्क देशों में द्विपक्षीय विवाद भी इतने अधिक हैं। सहयोग और सामजस्य मुश्किल हो जाता है। यद्यपि शिखर सम्मेलनों में द्विपक्षीय विवाद पर चर्चा नहीं होता है। इसमें चीन, दक्षिण कोरिया, जापान, संयुक्त राष्ट्र, यूरोपीयन यूनियन अमेरिका, ईरान, मॉरीशस और म्यांमार को पर्यवेक्षक दर्जा दिया गया है। इससे इसके क्षेत्र में विस्तार हुआ है और आपसी व्यापार सहयोग में वृद्धि हुइ है।

18.6 इस्लामिक सम्मेलन संगठन (ओ.आई.सी.)

इस संगठन का आरम्भ 1971 में हुआ। इसकी पहल 1969 में मोरक्को में सम्पन्न मुस्लिम राज्यों के शिखर सम्मेलन में की गई। इसी तारतम्य में 1970 में करांची, पाकिस्तान में विदेश मंत्रीयों की बैठक हुई और Organization of Islamic Confrence - OIC का गठन हुआ, इसके 57 सदस्य राज्य हैं।

18.6.1 उद्देश्य एवं कार्य

1972 में स्वीकृत घोषणा पत्र में निम्न बातें सम्मिलित हैं-

1. इस्लामिक देशों के मध्य एकजुटता व सहयोग में वृद्धि करना।
2. आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृति व वैज्ञानिक क्षेत्रों में पारस्परिक सहयोग एवं आपसी सहायता को बढ़ावा देना।
3. रंगभेद, जाति भेद, अलगाव व असमानता का विरोध करना यह उपनिवेशवाद का घोर विरोधी है।
4. अन्तर्राष्ट्रीय शांति व सुरक्षा हेतु न्याय आधारित कार्यवाही करना।
5. फिलीस्तीनी लोगों के संघर्ष में सहायता देना। उनके राष्ट्र की रक्षा कर उन्हें अधिकार दिलाना।
6. धार्मिक स्थलों की सुरक्षा के प्रयासों को प्राथमिकता देना।
7. सम्मान, सुरक्षा, स्वतंत्रता और अधिकारों की रक्षा हेतु मुस्लिम देशों की आवाज बुलंद करना। इस हेतु संघर्ष करने पर तत्पर रहना।

8. संगठन के सदस्य देशों के मध्य आपसी समझ, सहयोग में वृद्धि हेतु अनुकूल वातावरण तैयार करना।

इस्लामिक सम्मेलन संगठन के सदस्य देश

सदस्य देश है इसमें अफगानिस्तान, अल्जीरिया, बहराइन, बेनिन, ब्रुनेई, बुरकीना, फासो, कमरून, चाड, कोमोरोस, जिबुती, मिस्त्र, गबन, मांबिया, गायना, गाया बिसाव, इण्डोनेशिया, ईरान, इराक, जोर्डन, कुवैत, लेबनान, लीबिया, मलेशिया, मालद्वीप, माली, मोरीतानिया, मोरस्को, नाइजर, नाइजेरिया, ओमन, पाकिस्तान, पेलेएटाइन, कावर, सउदी अरब, सिनेगल, सिपेरा, लियोग, सोमालिया, सूडान, सीरिया, तुनुसिया, टर्की, युगांडा, संयुक्त अरब अमीरत, यमन।

गठन एवं कार्य : इस संगठन ने आर्थिक, राजनीति, सामाजिक, वैज्ञानिक मुद्दों को उठाने और आपसी सहयोग बढ़ाने में सक्रिय भूमिका अदा की है यह इस क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि है-

इस्लामिक पुनर्बीमा निगमः इसमें 20 करोड़ अमेरिकी डॉलर पूंजी के साथ इस्लामिक पुनबीमा निगम बनाया गया है, जो बड़ी योजनाओं को लागू करने हेतु उपलब्ध कराया जाता है।

इस्लामिक एकजुटता कोष : इसका उद्देश्य मुस्लिम देशों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार करता है। इस हेतु युगांडा, मलेशिया, नाइजिरिया आदि देशों में विश्व विद्यालय खोले गये है। यह वैज्ञानिक क्षेत्र में शोध कार्यों को भी प्रोत्साहन देता है।

राजनीतिक क्षेत्र में फिलीस्तीनी मुक्ति मोर्चा को समर्थन देते के साथ 1981 से पवित्र शहर यरूशलेम को इस्राइल से मुक्त कराने व फिलीस्तीनियों को स्वतंत्र कराने के लिए जेहाद की शुरूआत करने पर सहमति बनी। साथ ही इजराइल आर्थिक क्षेत्र में बहिष्कार की बात भी रखी गई। अफगानिस्तान में रूसी सैनिकों का विरोध भी संगठन के द्वारा किया गया। यद्यपि आपसी व्यापार और सहयोग में तो वृद्धि हुई है, फिर भी राजनीतिक क्षेत्र में संगठन उतना सफल नहीं रहा है। इसी संगठन के 8 सबसे सशक्त देश- टर्की, इरान, इण्डोनेशिया, मलेशिया, नाइजीरिया, मिस्र, पाकिस्तान व बांग्लादेश ने पृथक विकासशील राष्ट्रों का समूह संगठित कर लिये है। यद्यपि OIC यूरोपीय संघ जैसा सफल नहीं रहा है, फिर भी यह एक महत्वपूर्ण संगठन है

18.7 अफ्रीकी एकता संगठन (ओ.ए.यू.)

यह यूरोपीय संघ की तर्ज पर अफ्रीकी राज्यों का संगठन है, जिसका गठन 1963 में हुआ। इसके आरम्भिक सदस्य 30 थे जो आज बढ़कर 53 हो गये। आज इसे अफ्रीकी एकता संगठन के स्थान पर अफ्रीकी संघ कहा जाने लगा है। यह सिर्फ अफ्रीकी महाद्वीप के राज्यों के लिए ही है। इसकी सदस्यता की पहली शर्त हैं कि इसके सदस्य स्वतंत्र और सम्प्रभु राज्य ही हो सकते हैं यद्यपि यह सदस्यता की दृष्टि से सबसे बड़ा क्षेत्रीय संगठन है।

18.7.1 उद्देश्य

1. अफ्रीकी देशों में प्रत्यक्ष निवेश तथा विदेशी पोर्टफोलियों निवेश को आकर्षित करना।
2. अफ्रीकी देशों में मध्य एकता व एकजुटता बढ़ाना।

3. अफ्रीकी लोगों के कल्याण के लिए कार्य करना व उच्च जीवन स्तर को प्राप्त करनां।

4. अफ्रीकी में हर तरह के उपनिवेशवाद की समाप्ति तथा नक्सलवाद व रंगभेद का घोर विरोध करना।

5. अफ्रीकी देशों की सम्प्रभुता, सीमा, सम्मान व स्वतंत्रता की रक्षा करने के साथ ही मानवाधिकार हेतु संरक्षण को प्रोत्साहन देना।

6. अफ्रीकी देशों में लोकतांत्रिक सरकारों की स्थापना करना।

नए अफ्रीकी संघ हेतु प्रावधान

1. **अफ्रीकी संसद** : लीबिया की राजधानी त्रिपोली में अखिल अफ्रीकी संसद का गठन होगा जिसमें अफ्रीकी संघ के देशों के प्रतिनिधि चुनकर आयेंगे। यह नीति निर्माण संस्था होगी।

2. **आर्थिक क्षेत्र** : अफ्रीकी संघ को आर्थिक विकास का मंच बनाया जायेगा यह राजनीतिक कम आर्थिक अधिक होगा।

3. **शांति सेना** : अफ्रीकी संघ की अपनी शांति सेना होगी जो आन्तरिक संघर्षो, विवादों और जातीय हिंसा के समय शांति स्थापना में सहायक होगी।

4. **हस्तक्षेप का अधिकार** : अफ्रीकी संघ को जनसंहार और युद्ध सम्बन्धी अन्यायपूर्ण परिस्थितियों में हस्तक्षेप का पूर्ण अधिकार होगा।

5. **केन्द्रीय बैंक** : अफ्रीकी संघ का केन्द्रीय बैंक होगा जो मुद्रा विनियम के समान प्रावधान लागू करेगा साथ ही अफ्रीकी बैंक की सामूहिक मुद्रा का संचालन करेगा।

6. **सामूहिक मुद्रा** : डॉलर के प्रभुत्व को कम कम करने के लिए अफ्रीकी संघ की पृथक मुद्रा होगी जिसका प्रचलन अफ्रीकी संघ के सभी सदस्य राज्यों की मुद्रा के स्थान होगा।

7. **केन्द्रीय न्यायलय** : अफ्रीकी संघ का केन्द्रीय न्यायालय भी होगा जो सदस्य राज्यों के द्विपक्षीय, बहुपक्षीय विवादों का निपटारा करेगा।

मूल्यांकन- अफ्रीकी संघ के सदस्यों की समस्याएं समान हैं वे गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा, जातीय हिंसा खूनी संघर्षों से जुझ रहा हैं। यहां लोकतांत्रिका मूल्यों का आभाव है। साथ ही उनके प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग विकसित देश सदियों से कर रहे हैं। किन्तु उनकी स्थिति में कोई सुधार नहीं है। इस हेतु अफ्रीकी देश अपनी गरीबी का जिम्मेदार विकसित देशों को मानते हैं। अतः वे अपने क्षेत्र के विकास में विकसित देशों की मदद चाहते हैं। यद्यपि यह संगठन लम्बे समय से अस्तित्व में हैं। फिर भी यह अवेक्षित प्रभाव नहीं बना सका। अफ्रीका में तख्ता पटल, जातीय व खूनी संघर्ष और आपसी मतभेद ने इसके प्रभावी भूमिका में बाधा उत्पन्न की है। यद्यपि नवीन अफ्रीका संघ से प्रभावी भूमिका की आशा की जा रही है, पर अफ्रीकी प्रभुत्व के लिये अफ्रीकी सदस्यों में संघर्ष अत्यधिक है, ऐसी स्थिति में इनमें एकजुटता अत्यधिक कठिन है।

18.8 सारांश

वर्तमान युग संगठनों का युग है। उनके बढ़ते महत्व और बढ़ती प्रासंगिकता ने उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के अध्ययन में महत्वपूर्ण स्थान दे दिया है। अनेक क्षेत्रीय संगठन समान

हित, समान समस्याओं समान मूल्यों और परम्पराओं के कारण अस्तित्व में आ गये है। इनमें से कुछ अत्यधिक सफल रहे है, कुछ थोड़े कम सफल रहे हैं। किन्तु क्षेत्रीय संगठनों की सफलता में अधिक मत भिन्नता और तालमेल की कभी बड़ी समस्या है। फिर भी क्षेत्रीय संगठनों का महत्व बढ़ गया है।

18.9 शब्दावली

1. यूरो-यूरोपीय संघ की प्रचलित मुदा

   शिखर सम्मेलन - जिसमें सदस्य राज्यों के राष्ट्राध्यक्ष भाग लें।

   SADF - South Asian Developing Fund

   मुक्त व्यापार क्षेत्र - जहां वस्तु व व्यापार के समान व उदार नियम हो

पुनरावलोकन - पुनः विश्लेषण करना या देखना ताकि व्यापार निर्बाध हो सके।

18.10 सम्बन्धित प्रश्न

1. यूरोपीय संघ पर टिप्पणी लिखिए

   ----

2. यूरोपीय संघ की संरचना बताइये?

   ----

3. आसियान से क्या तात्पर्य है?

   ----

4. भारत आसियान सम्बन्धों पर टिप्पणी लिखिए

   ----

5. एपेक से क्या अभिप्राय है?

----

6. दक्षेस के उद्देश्यों की चर्चा कीजिए?

----

7. दक्षेस की सफलता में प्रमुख बाधाऐं कौन सी हैं?

----

8. ओ.आई.सी. से आप क्या समझतें हैं?

----

9. नए अफ्रीकी संघ की प्रमुख विशेषताऐं क्या हैं?

DCEPS-03
अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड – 3

विकास सम्बन्धी मुद्दे

इकाई – 19 63

पर्यावरण और सतत् मानव विकास

इकाई – 20 75

नारी अधिकारी एवं आन्दोलन

इकाई – 21 85

मानवाधिकार एवं अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति

इकाई – 22 93

अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद

इकाई – 23 105

संचार प्रौद्योगिकी में क्रान्ति एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

DCEPS-103

कुलपति एवं मार्गदर्शक

प्रो. सीमा सिंह **उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज**

विशेषज्ञ समिति

(1) **प्रो. एम. पी. सिंह – सदस्य**
प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, 34 उत्तरांचल अपार्टमेंट, 5, आईपी एक्सटेंशन पटपड़गंज, नई दिल्ली

(2) **प्रो. एस.पी. एम त्रिपाठी – सदस्य**
प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

(3) **प्रो.एल.आर.गुर्जर – सदस्य**
प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, वर्धमान महावीर मुक्त विश्वविद्यालय, कोटा राजस्थान

(4) **डॉ.दीपशिखा श्रीवास्तव – सचिव**
शैक्षणिक परामर्शदाता ,राजनीतिक विज्ञान विभाग, यू.पी.आर.टी.ओ.यू ,प्रयागराज

लेखक

1. **प्रो0 संजय श्रीवास्तव** — **प्रोफेसर, राजनीतिक विज्ञान,** बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय **(इकाई–04, 05, 15)**
2. **डॉ0 विश्वनाथ मिश्रा** — **असि0 प्रोफेसर, राजनीतिक विज्ञान** आर0 महिला पी0जी0 कालेज वाराणसी **(इकाई– 06, 07, 08, 09, 10, 11, 12)**
3. **डॉ0 स्वाती सुचरिता नन्दा** — **असि. प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान** डी0ए0वी0 पी0जी0 कालेज वाराणसी **(इकाई–01, 02, 03, 21, 22, 23)**
4. **डॉ0 अर्चना सुदेश मैथ्यू** — **असि. प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान** पी0जी0 कालेज छिन्दवाड़ा, मध्य प्रदेश **(इकाई–13, 14, 16, 17, 18)**
5. **डॉ दीपशिखा श्रीवास्तव** — **शैक्षणिक परामर्शदाता, राजनीतिक विज्ञान** यू.पी.आर.टी.ओ.यू ,प्रयागराज **(इकाई– 19, 20)**

संपादक / परिमापक

डॉ. नागेश्वर प्रसाद शुक्ला प्राचार्य गन्ना उत्पादक पी0जी0 कालेज, बहेड़ी, बरेली

समन्वयक

डॉ. दीपशिखा श्रीवास्तव, शैक्षणिक परामर्शदाता, राजनीतिक विज्ञान विभाग, यू.पी.आर.टी.ओ.यू, प्रयागराज

(मुद्रित)

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0 International License.

ISBN- 978-93-83328-37-6

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन – उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज–211021

इकाई-19

पर्यावरण और सतत् मानव विकास

इकाई की रूपरेखा

19.0 उद्देश्य

19.1 प्रस्तावना

19.2 पर्यावरण का अर्थ और विकास

19.3 सतत् मानव विकास की संकल्पना

19.4 मानव एवं पर्यावरण

19.5 पर्यावरण प्रदूषण के प्रकार

19.5.1 वायु प्रदूषण

19.5.2 जल प्रदूषण

19.5.3 ध्वनि प्रदूषण

19.5.4 मृदा प्रदूषण

19.5.5 घरेलू उत्सर्गों का प्रदूषण

19.6 पर्यावरण संरक्षण

19.7 पर्यावरण पर राजनीति

19.8 सारांश

19.9 सम्बन्धित प्रश्न

19.10 संदर्भ ग्रन्थ

19.0 उद्देश्य

इस इकाई में पर्यावरण के सम्बन्ध में आज के सन्दर्भ में उठते अनेक प्रश्नों के विषय में चर्चा किया गया है। इसका उद्देश्य-

- पर्यावरण के विषय में जानकारी प्राप्त कराना।
- सतत् मानव विकास की संकल्पना से अवगत कराना है।
- पर्यावरण की समस्याओं तथा पर्यावरण पर होने वाली राजनीति पर प्रकाश डालना है।

19.1 प्रस्तावना

इस इकाई के अन्तर्गत पर्यावरण से जुड़े विभिन्न मुद्दों को प्रस्तुत किया गया है। पर्यावरण किसी भी मनुष्य के जीवन के विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है। पर्यावरण मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष के लिये अनिवार्य एवं आवश्यक दशा है। परन्तु वर्तमान में पर्यावरण को जिस प्रकार से प्रदूशित किया जा रहा है और विकास के नाम पर जिस प्रकार से उसका दोहन हो रहा है वह एक चिन्तनीय विषय है।

मानव जीवन में सतत् विकास की प्रक्रिया जीवन स्तर को सुधारने की आवश्यक प्रक्रिया है। विकास के साथ पर्यावरण का संरक्षण भी आवश्यक है। सतत् विकास सदैव जनहित को ध्यान में रखते हुए करना चाहिये।

आज पर्यावरण के प्रदूषण की समस्या दिन पर दिन गहरी होती जा रही है जैसे वायु-प्रदूषण, जल-प्रदूषण, ध्वनि-प्रदूषण, मृदा-प्रदूषण, घरेलू उत्सर्जों का प्रदूषण आदि। इसके लिये समय-समय पर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस मुद्दे पर विभिन्न सम्मेलनों, कार्यक्रमों के माध्यम से विचार किये जाते रहे हैं।

पर्यावरण की असंतुलन की स्थिति में जीवन में जो घटनायें जैसे प्राकृतिक आपदा ग्लोबल वार्मिंग, जल संकट आदि घटित हो रही हैं उसमें आवश्यकता इस बात की है कि पर्यावरणीय संकट को टाला जाये एवं इससे जुड़ी समस्याओं को दूर किया जाये। पर्यावरण से जुड़ी राजनीति एवं उसके संरक्षण का मुद्दा एक विचारणीय प्रश्न है।

19.2 पर्यावरण का अर्थ और विकास

प्रत्येक जीव इस संसार में आने के पश्चात् अपने आस-पास की वस्तुओं से व्यक्तियों से प्रभावित होता है। व्यक्ति के विकास की यह सम्पूर्ण प्रक्रिया पर्यावरण से सम्बद्ध होती है। प्राणियों पर प्रभाव डालने वाले समस्त कारकों को पर्यावरण कहा जाता है।

संसार में किसी भी प्राणी को जीवित रहने अथवा अपना विकास करने के लिए किन्हीं विशिष्ट की स्थितियों एवं परिस्थितियों की आवश्यकता होती हैं यदि ये विशिष्ट परिस्थितियां व्यक्ति के चारों ओर विद्यमान हैं तो उसका विकास एवं जीवन संभव हो सकता है। इन स्थितियों में भौगोलिक, जैविक, सांस्कृतिक तत्व सम्मिलित होते हैं। भौगोलिक तत्वों के अन्तर्गत जल, वायु, पृथ्वी और सौर ऊर्जा, ताप आदि सम्मिलित होता है। किसी भी प्राणी के लिए जीवित रहने के लिए इन दशाओं का होना आवश्यक है। साथ ही यह मानव अस्तित्व के लिए भी आवश्यक है। इसे सम्मिलित रूप से पर्यावरण कहते हैं। यह सभी तत्व आपस में एक दूसरे को प्रभावित करते हैं।

पर्यावरण को अंग्रेजी में एनवायरनमेण्ट (Environment) कहा जाता है। पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ परि-आवरण अर्थात् जो चारों ओर से घेरे हुए हो। पर्यावरण का सामान्य अर्थ चारों ओर के सभी प्रकार के भौगोलिक एवं जैविक व सांस्कृतिक तत्वों से हैं।

पर्यावरण की परिभाषाएँ

(i) आइन्सटीन के अनुसार पर्यावरण वह सब कुछ है जो मैं नहीं हूँ।

(ii) पी0 जिसबर्ट के अनुसार - ''प्रत्येक वह वस्तु जो किसी वस्तु को चारों ओर से घेरती एवं उस पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है, पर्यावरण है।''

(iii) एन0 के0 चक्रवर्ती के अनुसार - ''पर्यावरण से तात्पर्य किसी भी व्यक्ति के चारों ओर के सजीव व निर्जीव तत्वों से हैं किन्तु इसमें निर्मित पर्यावरण सम्मिलित नहीं हैं।'

(iv) सी0सी0 पार्क के अनुसार पर्यावरण का अर्थ उन दशाओं के योग से होता है जो मनुष्य को निश्चित समय में निश्चित स्थान पर आवृत्त करता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से पर्यावरण का अर्थ स्पष्ट होता है। वास्तव में पर्यावरण एक विस्तृत अवधारणा है तथा यह अवधारणा विभिन्न रूपों में प्राणियों को प्रभावित करती है। पर्यावरण जीवन के प्रत्येक पक्ष में अन्तर्निहित है। इसके अतिरिक्त यह मनुष्य के मस्तिष्क और मांसपेशियों में किसी न किसी रूप में विद्यमान है और उसके रक्त में समायोजित होकर कार्य कर रहा है।

प्राचीन काल में विकास पर्यावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करके किया जाता था। भारतीय संस्कृति व धर्म का गहराई से अध्ययन किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि भारतवर्ष में पर्यावरण के प्रति चिन्तन आदि काल से चला आ रहा है। यहाँ कि संस्कृति और धर्म में न केवल पर्यावरण की गुणवत्ता बनाए रखने पर जोर दिया गया है बल्कि भौतिक विकास के साथ प्रकृति व प्राकृतिक संसाधनों के उपयुक्त प्रयोग पर भी पर्याप्त मार्गदर्शन उपलब्ध कराया गया है।

भारतीय संस्कृति के वैदिक वाङ्मय, पुराण, आर्शकाव्य, शास्त्रीय ग्रन्थ तथा लौकिक संस्कृति साहित्य की दीर्घ परम्परा में पर्यावरण के प्रति इतना ज्ञान उपलब्ध है कि इसे समग्र रूप से पारिस्थितिकी अथवा पर्यावरण शास्त्र कहा जा सकता है।

कौटिल्य रचित अर्थशास्त्र वन्य जीवों के श्रेष्ठ आवास बनाने व प्रबन्धन के लिए अनेक मार्गदर्शन देता है। छठी शताब्दी ईसा पूर्व भारत में महात्मा बुद्ध, भगवान महावीर स्वामी ने बौद्ध एवं जैन धर्म का प्रवर्तन किया इन प्रबुद्ध चिन्तकों की विचारधारा में भी पर्यावरण को पर्याप्त स्थान मिला था। इसी प्रकार भारत में प्रचलित दो और सांस्कृतियों मुस्लिम व सिक्ख में भी पर्यावरण के प्रति पर्याप्त चिंतन मिलता है। पर औपनिवेशिक शासन की स्थापना तथा उसकी शोषणकारी नीतियाँ पर्यावरण के लिए घातक सिद्ध हुयी और औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया तथा भौतिकवादी सोच ने पर्यावरण के प्रति भारतीय परम्परागत सोच में बदलाव कर दिया। देश की आजादी के पश्चात् भी हमने विकास के इसी सोच को आगे बढ़ाया। हमारे देश में एक समग्र पर्यावरण नीति के स्थान पर पर्यावरण के विभिन्न घटकों से सम्बन्धित पृथक-पृथक नीतियां प्रवर्तित होती रही है। इनमें राष्ट्रीय वन नीति 1988, राष्ट्रीय संरक्षण कार्य नीति तथा पर्यावरण एवं विकास पर वक्तव्य 1992 प्रमुख है।

पर्यावरण का विकास समय बदलने के साथ ही विकास की मूल अवधारणाओं को छोड़कर सिर्फ स्वहित पर आधारित होकर विकास किया जा रहा है और विकास के मूल्य बदल दिये गये। यदि हम प्रकृति के साथ सामंजस्य करके विकास करें तो पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है। भौतिक विकास की अंधी दौड़ और विकासशील देशों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के अतिदोहन ने वैश्विक पर्यावरण को प्रदूषित कर पर्यावरण असंतुलन को उस सीमा तक पहुँचा दिया है जहाँ असंतुलित एवं अवक्रमित पर्यावरण में रहने से स्वयं मानव अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लग गया है।

19.3 सतत् मानव विकास की संकल्पना

आज मानव के सतत् विकास के लिए ऐसी समान व्यवस्था की आवश्यकता है जिससे सभी को अपना जीवन स्तर सुधारने को मौका मिले और आम आदमी का स्तर सामान्य से ऊपर उठ सके। आज विडम्बना यह है कि 20 प्रतिशत व्यक्ति संसाधनों का जरूररत से अधिक उपभोग कर रहा है और 80 प्रतिशत व्यक्ति अपनी जरूरतें भी पूरी नहीं कर पा रहा है। यह मानवीय विकास की दिशा में सबसे बड़ा विरोधाभास है। वस्तुतः सतत् विकास एवं उपभोग में सामंजस्य बनाना अति आवश्यक है।

विकास को जब हम पर्यावरण से जोड़कर देखते हैं तो हम पाते हैं कि इसकी आवश्यकता विकसित देशों को ही ज्यादा है। विकास एक व्यापक अवधारणा है जिसका एक पक्ष पर्यावरण के क्षेत्र में प्रगति करना है। लेकिन वर्तमान समय में आर्थिक और सामाजिक विकास के नाम पर पर्यावरण का जो दोहन और प्रदूषण किया जा रहा है। उससे विकास विनाश का पर्याय बनता जा रहा है। आज हवा पानी जो प्रदूषित हो रहा है, मानव स्वास्थ्य गिर रहा हैं, ऐसी स्थिति में विकास के अन्य आयामों से ज्यादा महत्वपूर्ण पर्यावरण हो गया है। इसलिये आवश्यक है कि हम पर्यावरण के सापेक्ष विकास के अन्य आयामों पर जोर दिया जाए।

विकास के जितने भी प्रतिमान प्रस्तुत किए गए उनमें पर्यावरण पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। सतत् विकास की संकल्पना वह है जो स्थायी होती है। पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग ने यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया कि वर्तमान पीढ़ी को भविष्य की पीढ़ी से कोई समझौता किये बिना अपनी आवश्यकता पूरी करनी चाहिए जिससे भविष्य की पीढ़ी अपनी आवश्यकता पूरी कर सके।

सतत् विकास की संकल्पना यह है कि प्रत्येक पीढ़ी को अपनी आवश्यकताओं को अपने संसाधनों से पूर्ति कर पर्यावरण पर जीवित रहे। मानव विकास को संरक्षित किया जा सकता है। यदि उसकी सही देखभाल की जाय। सतत् विकास केवल भविष्य में ही नहीं बल्कि वर्तमान को ध्यान में रखकर होना आवश्यक है।

मनुष्य सदैव विकास के पथ पर अग्रसर होता जा रहा है। मानव के बिना विकास तथा विकास के बिना मानव के बिना मानव का जीवन अर्थहीन है। आज समय की मांग को देखते हुए उचित तकनीक तथा संसाधनों का आवश्यकतानुसार उपयोग करके विकास का मार्ग अपनाना चाहिए। पूर्व प्रधानमंत्री स्व0 इंदिरा गाँधी पर्यावरण चेतना उत्पन्न करने वाली प्रथम तथा विश्व की अग्रणी महिला थीं। उन्होंने एक भाषण में कहा कि 'धनी देश एक ओर निरंतर हमारे गरीब रहने का कारण पूछते हैं और दूसरी और इमें अगाह भी करते हैं कि हम उनके तौर-तरीके न अपनायें।'

भारत एक विकासशील देश होने के कारण हमारा सतत् विकास जनहित तथा पर्यावरण को ध्यान में रखकर होना चाहिए जिसके लिए हमें विज्ञान तथा तकनीक का सहारा तो अवश्य ही लेना पड़ेगा। हमारा सबसे अधिक प्रयास विकास के लिए होना चाहिए जिससे कि हमारी निर्धनता तथा बेरोजगारी दूर हो। ऐसे उपायों के बारे में सोचा जाये जिनसे मनुष्य अपनी समस्याओं से विमुक्त होकर वनों का विनाश न करें।

आज सतत् विकास की ओर बढ़ते हुए कदम भी विकासशील देशों की प्राथमिक आवश्यकताएँ पूरी नहीं कर पा रहे हैं। रोटी, कपड़ा और मकान व्यक्ति के जीवन स्तर को उठाने

की पहली सीढ़ी हैं। सतत् विकास के लिए आर्थिक सुदृढ़ता का होना आवश्यक है जो कि संसाधनों को जुटाने के लिए आवश्यक है। इसके लिए आवश्यक है कि दूसरों का शोषण न किया जाए। आर्थिक विकास व्यक्ति की परिस्थिति में परिवर्तन लाता है।

सतत् विकास मात्र प्रगति नहीं है बल्कि विकास की ऐसी दिशा प्रदान करता है जिससे कम से कम संसाधनों एवं ऊर्जा की खपत से पूरे समुदाय का सामूहिक विकास हो। किसी भी देश की प्रगति संसाधनों के सदुपयोग या दुरूपयोग पर निर्भर करती है। स्थित प्रगति तभी संभव है जब पर्यावरण में संतुलन स्थापित हो। भूमि, कृषि आदि के प्रयोग का वैज्ञानिक मापदंड होना चाहिए।

सतत् विकास के लिए यह भी आवश्यक है कि विकास की पद्धति सही ढंग से लागू की जाये। इसके लिए विकास में सहायक कानूनी एवं संस्थागत ढाँचे को तैयार किया जाये। जब किसी योजना का मूल्यांकन किया जाए तो उसमें जनहित का ध्यान रखे जाने के साथ पर्यावरण पर ध्यान रखना भी आवश्यक है। विकास को सफल बनाने के लिए आवश्यक है कि कुछ निम्न बिन्दुओं पर ध्यान दिया जाये-

1. सतत् विकास की प्रक्रिया को सफल बनाने के लिए आवश्यक है कि उसमें जन-सहभागिता अवश्य हो।
2. ऐसी आर्थिक व्यवस्था हो जो नयी तकनीक के माध्यम से समाज को आत्मनिर्भरता प्रदान करें।
3. सतत् विकास के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण भी किया जाये।
4. स्थानीय स्तर पर वन पंचायत की व्यवस्था होनी चाहिए।
5. विकास कार्यों को लागू करने के लिए गैर सरकारी एजेंसियों की भी व्यवस्था होनी चाहिए।
6. विकास के साथ ही साथ पर्यावरण संरक्षण आवश्यक है।

आज हम उद्योगों के विस्तार से सम्पन्न हो सकते हैं परन्तु पर्यावरण के बिना यह विकास सच्चा विकास नहीं हो सकता हैं। संतुलित ढंग से विकास करना अधिक कठिन है। प्रसिद्ध पर्यावरणविद् प्रो0 रामदेव मिश्र कहते हैं कि स्वच्छ पर्यावरण जैसे भी बन सके बनाये रखना चाहिए। ऊर्जा प्रवाह और पदार्थों का संचालन प्राकृतिक परितंत्रों के अनुसार सामाजिक सेवा में इस धारणा से लगाना है कि पर्यावरण से उधार ली हुई चीजें उसे वापस कर देनी है। जब तक हमारे अर्थ और विज्ञान नैतिकता का सहारा नहीं लेंगे तब तक हमारा कल्याण नहीं हो पायेगा। एक नयी सभ्यता का विकास करना है जिसमें व्यक्ति, समाज, भौतिक तथा जैविक संसाधन उन्नत किये जा सके। इस प्रकार पर्यावरण का संरक्षण हमारी नैतिक जिम्मेदारी है। हमें प्रत्येक विकास कार्य में पर्यावरण शुद्धता को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए।

19.4 मानव एवं पर्यावरण

मानव आवश्यकताओं की निरंतर पूर्ति तथा अविरल विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है। भारत विश्व में एक मात्र ऐसा देश है जिसने पर्यावरण के सम्बन्ध में संविधान में संशोधन किया है। भारत में 42वें संविधान संशोधन 1976 के द्वारा पर्यावरण के संरक्षण को संविधान में शामिल किया गया है। भारत के प्रत्येक नागरिक का यह

पहला कर्त्तव्य है कि प्राकृतिक पर्यावरण की जिसके अन्तर्गत वन, झील नदी और वन्य जीव भी है रक्षा करें, उनका संवर्धन करें।

आज आर्थिक गतिविधियां पर्यावरण को हानि पहुँचाने में सक्रिय रूप से कार्य कर रही है। खनिज तेल भंडार खत्म होने की स्थिति में है। कोयला खनन पर्यावरण के लिए घातक सिद्ध हो रहा है। पर्यावरणविदों ने जनचेतना जाग्रत करके लोगों को इस ओर आकर्षित किया है। पर्यावरण प्रदूषण की समस्या आजकल विश्वभर में चिन्ता का विषय बनी हुई है। बढ़ता हुआ प्रदूषण नष्ट होता हुआ पर्यावरण सभी के लिए गम्भीर चुनौती बनता जा रहा है।

सरकारी नीतियां और योजनाओं के चलते भी आज पर्यावरण संकट गहराता जा रहा है। जिससे वनारोपण, विस्थापन, कृषि भूमि का आबंटन जैसे मुद्दों की समस्याएं आ रही है। कुछ नीतियां वास्तव में इतनी हानिकारक है कि उनसे पर्यावरण को नुकसान होता है।

पर्यावरण संरक्षण हेतु आज काफी जोर दिया जा रहा है। पर्यावरण की रक्षा वर्तमान काल का सबसे चिन्तनीय विषय है। क्योंकि पर्यावरण के आधार पर ही मानव का जीवन संचालित होता है। यदि पर्यावरण स्वच्छ एवं मानव जीवन के अनुकूल होगा तभी मानव सुखमय जीवनयापन करते हुए उत्तरोत्तर विकास के मार्ग पर अग्रसर हो सकेगा। यह विडम्बना ही है कि आज मानव अपने भौतिक विकास की महात्वाकांक्षा के सम्मुख शनैः शनैः पूरे पर्यावरण को अपने प्रतिकूल करता चला जा रहा है। परिणामस्वरूप आज समाज में वायु-प्रदूषण, जल-प्रदूषण, ध्वनि-प्रदूषण, मृदा-प्रदूषण के साथ-साथ सांस्कृतिक एवं सामाजिक प्रदूषण भी दिनोदिन व्याप्त होता जा रहा हैं जिसके कारण सम्पूर्ण मानव समाज का जीवन कष्टमय होता चला जा रहा है। ऐसे समय में मानव समाज को ऐसे मार्ग की आवश्यकता है जिस पर चलकर वह प्रकृति का समुचित उपयोग करते हुए पर्यावरण को भी सुरक्षित बनाये रखे एवं साथ ही साथ अपना भौतिक विकास भी करते रहे।

19.5 पर्यावरण प्रदूषण के प्रकार

पर्यावरण प्रदूषण के लिए किसी एक कारण को ही उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता हैं क्योंकि यह अलग-अलग रूपों में उजागर होता है। हमारे जो प्राकृतिक अवयव प्रदूषित होते नजर आ रहे हैं उसके आधार पर प्रदूषण को पाँच भागों में बाँटा जा सकता हैं-

(1) वायु प्रदूषण

(2) जल प्रदूषण

(3) ध्वनि प्रदूषण

(4) मृदा प्रदूषण

(5) घरेलू उत्सर्गों का प्रदूषण

19.5.1 वायु प्रदूषण

वायुमण्डल की अपनी एक निश्चित संरचना होती है और इसी संरचना में प्राण वायु ऑक्सीजन, प्रकाश संश्लेषण हेतु कार्बन डाईआक्साइड, व रक्षा कवच के रूप में ओजोन गैसें पाई जाती हैं। यद्यपि नाइट्रोजन प्राणी जगत के लिए अनिवार्य घटक है किन्तु यह जीवमण्डल को

प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित नहीं करता है। वायुमण्डल की इस संरचना में किसी भी गैसीय घटक के सान्द्रण में किसी भी प्रकार का परिवर्तन, चाहे वह प्राकृतिक हो अथवा मानवीयकृत, वायु-प्रदूषण कहलाता है। वायु-प्रदूषण के मुख्य कारक हैं, जैसे-

- कारखानों से निकलने वाला कचरा एवं उत्सर्जित कार्बन मोनो डाईआक्साइड।
- वातानुकूलन संयत्रों से उत्पन्न क्लोरो-फ्लोरो कार्बन।
- नाभिकीय विस्फोट से उत्सर्जित रेडियो एक्टिव तत्व।
- वाहनों से (रेल, वायुयान, स्वचालित वाहन) उत्पन्न कार्बन डाईआक्साइड।
- रसोईघरों से निकलने वाला धुँआ, जीवाश्म ईंधन आदि।
- कचरा सड़ने से कार्बन मोनो व कार्बन डाईआक्साइड।

19.5.2 जल प्रदूषण

जल प्रदूषण से तात्पर्य जल के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में इस प्रकार परिवर्तन होना जिससे जल में हानिकारक प्रभाव उत्पन्न करता है। जल में विजातीय तत्वों के मिल जाने से उसमें भौतिक, रासायनिक जैविक, गुणों में परिवर्तन आ जाता है। फलतः जल प्रदूषित हो जाता है और यही जल-प्रदूषण जल कहलाता है। जल को प्रदूषित करने वाले कारकों में मुख्य रूप से है-नगरीय अपशिष्ट, खनिज तेल, अपमार्जक, कृषि रसायन, औद्योगिक अपशिष्ट, रेडियोधर्मिता, धार्मिक गतिविधियों अंधविश्वासों के कारण प्रदूषण।

19.5.3 ध्वनि प्रदूषण

ध्वनि प्रदूषण में उन्हीं तत्वों को सम्मिलित किया जाता है जो मानवीय गतिविधियों के कारण अप्राकृतिक अथवा कृत्रिम रूप से शोर उत्पन्न करता है। शहरीकरण, मनोरंजन, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, क्रियाकलापों के कारण इसकी उत्पत्ति होती है।

ध्वनि किसी भी सजीव या निर्जीव वस्तु द्वारा सामान्य आवाज है। जब शोर इतना बढ़ जाये कि मानव स्वास्थ्य जीव जन्तुओं द्वारा असहनीय होकर किसी न किसी रूप में शारीरिक, मानसिक आघात पहुँचाने में सक्षम हो तो इसे ध्वनि प्रदूषण कहते हैं।

19.5.4 मृदा प्रदुषण

मृदा प्रदूषण में मृदा के अवयवों में किसी प्रकार का परिवर्तन जो उसकी जीवन दायिनी शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है और उसकी आकृति संरचना में प्रतिकूल परिवर्तन कर देता है। जैसे- मृदा-अपरदन, जल-प्रदूषण द्वारा औद्योगिक रासायनों द्वारा खनन द्वारा प्रदूषण, अपशिष्टों द्वारा प्रदूषण आदि।

19.5.5 घरेलू उत्सर्गों का प्रदूषण

वर्तमान समय से इस प्रकार का प्रदूषण दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। यह पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित करता है। यह प्रदूषण सबसे अधिक जल, मृदा, वायु को प्रभावित करता है। शहरी विकास ने इस प्रकार के प्रदूषण को काफी प्रभावित किया है।

19.6 पर्यावरण संरक्षण

राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण में बदलाव लाने की दृष्टि से विभिन्न सम्मेलनों तथा कार्यक्रमों की घोषणा की जाती रही हैं। जिससे पृथ्वी सम्मेलन, एजेंडा 21, रियो घोषणा, विश्व सम्मेलन आदि प्रमुख है।

आज पर्यावरण में प्रदूषण, छेड़छाड़ तथा उसके प्राकृतिक असंतुलन की स्थिति के कारण समय-समय पर इस पृथ्वी पर आने वाली प्राकृतिक आपदायें, वन विनाश, प्राकृतिक असंतुलन इस बात का प्रमाण है कि पर्यावरण को क्या-क्या नुकसान हो रहा है। जिससे विनाशकारी बाढ़, वर्षा, भुखमरी, गरीबी, जैसी समस्याओं से हम जूझ रहें हैं।

धीरे-धीरे वातावरण में बनी ओजोन की परत भी नष्ट हो रही है जिससे पृथ्वी पर सूर्य की किरणों का दुष्प्रभाव दिखाई देने लगा है। ग्रीन हाउस उत्सर्जन से वातावरण में प्रदूषण व्याप्त हो रहा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम मिल बैठकर इस समस्या पर विचार करें। जिससे पर्यावरणीय संकट को टाला जा सके।

पर्यावरण की सबसे बड़ी समस्या उसमें प्रदूषण का जन्म लेना है। यह प्रदूषण आज इस हद तक घर कर गया है कि आज हमारे पर्यावरण का अस्तित्व संकट में पड़ गया है और इसको बचाना तथा विनाशकारी परिस्थितियों से छुटकारा दिलाने का कार्य चुनौतियों भरा तथा असंभव सा हो गया है। पर्यावरण प्रदूषण के लिए किसी एक विशेष कारण को उत्तरदायी ठहराना उचित नहीं होगा क्योंकि यह हमारे विभिन्न क्रियाकलापों के परिणामस्वरूप हमारे सामने अलग-अलग रूपों में उजागर हुआ है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने पर्यावरण को अपना कार्यक्षेत्र माना है जिसके तहत 1992 में राष्ट्र संघ ने पर्यावरणीय समस्या पर विचार करने तथा निदान के उपाय करने के लिए राष्ट्र संघ के सदस्यों की बैठक बुलायी और उसमें उन्हें इसके संरक्षण के लिए उच्च टेक्नॉलॉजी पर विशेष बल दिया।

20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पर्यावरण प्रदूषण की समस्या ने नए आयाम प्राप्त किये हैं। भोपाल गैस त्रासदी (1984), चेरनोबिल दुर्घटना (1986) और विश्व के अनेक देशों में अकाल की विभीशिका इस प्रवृति के नमूने के रूप में ली जा सकती है। अमरीकी प्रतिष्ठान यूनियन कार्बाइड के भोपाल स्थित कारखाने में गैस रिसाव के कारण हजारों लोगों की जान गयी और अनेक लोग विकलांग हो गये। चेरनोबिल परमाणु बिजलीघर में दुर्घटना के कारण विशाक्त विकिरण ने वायुमण्डल को व्यापक पैमाने पर प्रदूषित ही नहीं किया वरन् आस-पास के क्षेत्रों को भी विशाक्त कर दिया। चेरनोबिल की घटना को देखते हुए लगभग 200 परमाणु बिजलीघरों को बन्द कर दिया गया।

राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी पर्यावरण की समस्या काफी गम्भीर है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण की समस्याएं राज्यों के बीच समझौते एवं सहयोग पर भी आधारित है। संयुक्त राष्ट्र ने भी पर्यावरण के विकास तथा संकट को कम करने की दिशा में काफी प्रयास किए हैं। विश्व भर के सभी देशों का मानना है कि पर्यावरण संरक्षण को बेहतर बनाने के लिए एवं सुरक्षा प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि इसके लिए ठोस कदम उठाये जाये।

औद्योगिक विकास के इतिहास की भयानक दुर्घटनाओं में एक भोपाल गैस दुर्घटना है। यह दुर्घटना 1984 में भोपाल के यूनियन कर्बाइड कीटनाशक कारखाने में मिथाइल आइसोसाइनाइड और फॉस्जीन गैस के वाष्पीकरण और रिसाव के कारण हुई। शहर की 2 लाख के करीब जनसंख्या पर इसका प्रभाव पड़ा। यूनियन कार्बाइड जैसे रसायन की पर्यावरण संरक्षण के लिए कार्य करने वाले लोग आलोचना करते रहे हैं।

गत वर्ष 29 जून 2013 को उत्तराखण्ड में आपदा का मुख्य कारण दो ग्लेशियरों की ऊपरी परत का पिछलना रहा है। आई.आई.आर.एस. (भारतीय सुदूर संवेदन संस्थान) द्वारा जारी रिपोर्ट बताती है कि इन ग्लेशियरों की ऊपरी परत पिघलती रही है। इस रिपोर्ट के अनुसार ग्लेशियरों को ऊपरी परत पिघलने से पानी का सैलाब फूटा एवं रास्ते में जो चीजें साामने आई वह बह गईं।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने विकास और पर्यावरण को आपस में सम्बद्ध बताया है और पर्यावरणीय गिरावट के लिए आज के विकास की नीति को जिम्मेदार माना है।

19.7 पर्यावरण पर राजनीति

पर्यावरण की राजनीति के अन्तर्गत पर्यावरण संरक्षण से सम्बन्धित विभिन्न सम्मेलन, आन्दोलन, जन समर्थन, राजनीतिक तथा संसदीय हस्तक्षेप आदि शामिल हैं। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसका विभिन्न प्रकार से इस्तेमाल हुआ है। कभी इसे जनसुधार के जनांदोलन के रूप में लिया गया तो कभी इसे संसदीय स्तर पर लिया गया है। कुछ राजनीतिज्ञों द्वारा इसका प्रयोग लोकप्रियता तथा वोट हासिल करने के लिए किया जा रहा है तो कभी अपने राजनीतिक हितों को प्राथमिकता देकर प्रदूषण के दुष्परिणामों को नजरअंदाज किया जा रहा है।

पर्यावरण को राजनीति तथा आन्दोलनों के रूप में अलग-अलग समय के अनुसार अलग-अलग प्रकार से लिया गया है। वर्तमान समय में पर्यावरण की रक्षा और पारिस्थितिकी संरक्षण की आवश्यकता के बारे में मानव चेतना काफी जाग्रत हो चुकी है। दुनिया भर में होने वाली विरोध रैलियाँ और जनप्रदर्शन इस बात की ओर संकेत करते हैं कि हरित आन्दोलन के प्रति जागरूक होकर लोग पर्यावरण संरक्षण को अपना आवश्यक कर्तव्य मानने लगे हैं। अब राजनीति में पर्यावरण का सक्रिय प्रवेश हो चुका है। यहाँ तक कि कई देशों के राजनीतिज्ञों ने पर्यावरण को चुनावी मुद्दा बनाकर चुनाव भी जीता है। इसके अतिरिक्त पर्यावरण को व्यावहारिक मुद्दा बनाकर अपना राजनीतिक लक्ष्य भी घोषित किया है। सरकारों की गलती से प्रदूषण के कई मामले राजनीतिज्ञों के निजी लाभ के कारण कष्टदायी हो जाते हैं।

आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरणीय राजनीतिक सम्मेलनों में जागरूकता का यह परिणाम निकला है कि अन्य देशों में भी पर्यावरण संरक्षण को लेकर राजनीतिक हलचल प्रारम्भ हो गयी है। उन्हीं देशों में से भारत भी है। कलान्तर में यह लोगों के चिंतन का विषय भी बन गया है और अन्य विषयों की भांति पर्यावरण की राजनीति भी विभिन्न पहलुओं के रूप में उजागर हुई है जिसमें सरकार द्वारा चलायी जा रही परियोजनाओं, संस्थाओं का प्रदूषण, औद्योगिकरण, वनों का विनाश, राजनीतिक हितकारी योजनाएं आदि प्रमुख मुद्दे हैं। हमारे देश में पर्यावरण की राजनीति दो प्रकार से मुखर हुई है-पहला ये सिर्फ राजनीतिक स्वार्थों से प्रेरित है जिसमें कि जनता तथा पर्यावरणीय हितों को अनदेखा कर दिया गया है। दूसरा जनता के हितों से प्रेरित होकर सरकार तथा प्रदूषणकर्ताओं के विरूद्ध की गयी राजनीतिक क्रियाएं हैं। विभिन्न प्रकार की

नीतियों और कार्यक्रमों के चलने पर भी सरकार द्वारा अधिक धनोपार्जन के लिए बड़े पैमाने पर वनों को काटा जा रहा है जो कि हमारे पर्यावरण की रक्षा में चतुर्मुखी विकास के तौर पर हानिकारक सिद्ध हो रहा है।

आज भारतवर्ष में पर्यावरण और उसके संरक्षण का विषय राजनीति तथा राजनीतिज्ञों और कानूनविदों से जुड़ने के कारण विचारणीय प्रश्न बना है। स्टाकहोम सम्मेलन में तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने पर्यावरण को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक सम्मेलन में अत्यधिक महत्व देने के बाद ही इसका राजनीति में सक्रिय तौर पर प्रवेश हुआ है और इसके बाद इसमें आम जनता तथा कुछ कर्त्तव्यनिष्ठ व्यक्तियों की भागीदारी से यह न्यायालय का विषय बनता जा रहा है।

पृथ्वी सम्मेलन जून 1992 रियो दि जिनेरियो (ब्राजील) में आयोजित हुआ था जिसमें उत्तर और दक्षिण के देशों में पर्यावरण के मुद्दों को लेकर मतभेद तथा महत्वपूर्ण विचारों को प्रस्तुत किया गया। विकसित देशों का मानना है कि जनसंख्या विस्फोट और गरीबी के कारण ही पृथ्वी की यह हालत हुई है। इसके विपरीत तीसरी दुनिया के लोगों का मानना है कि विकसित देशों के लोभ तथा उनके द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के अतिदोहन के कारण यह स्थिति उत्पन्न हुई है। इस सम्मेलन में छः महत्वपूर्ण मुद्दों पर उत्तर-दक्षिण देशों ने अपना मतभेद प्रकट किया, जैसे- ग्रीन हाउस, गैस उत्सर्जन, वन, तकनीक तथा धन।

गरीब देशों का यह मानना है कि अमीर देशों ने औद्योगीकरण से पर्यावरण की तबाही की है। ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन पर कटौती के मामले में विश्वव्यापी सहमति कायम करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने वैश्विक सम्मेलन इण्डोनेशिया के बाली द्वीप में 2019 में सम्पन्न किया।

1992 में रियो दि जिनेरियो में हुए पृथ्वी सम्मेलन में लिये गये निर्णयों की प्रगति की समीक्षा के लिए दूसरे पृथ्वी सम्मेलन के नाम से चर्चित सतत् विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन 26 अगस्त 2002 से 4 सितम्बर के दौरान जोहान्सबर्ग में सम्पन्न हुआ। विश्व के इस सबसे बड़े सम्मेलन में लगभग 200 राष्ट्रों के 60,000 से अधिक प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन का उद्‌घाटन दक्षिण अफ्रीका के राष्ट्रपति थांबोम्बेकी (Thabo Mbeki) ने किया।

जून, 2013 में यू.एन.ई.पी. द्वारा वैश्विक पर्यावरण की रिपोर्ट जारी की गई है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की वैश्विक रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत एशिया के उन 24 देशों में शामिल है जिसने ओजोन परत को क्षति पहुँचाने वाले क्लोरो-फ्लोरो कार्बन (सीएफसी), कार्बन स्ट्राक्लोराइड एवं हेलोन का उत्पादन एवं उपयोग बंद कर दिया है।

स्वच्छ पर्यावरण मनुष्य की जरूरत है। पिछले कई दशकों में विश्व स्तर पर पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति तीव्र चिन्ता सामने आई है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण की समस्या के प्रति जागरूकता को लेकर संगठन एवं संस्थाओं ने कई अभियान चलाये हैं। इसी क्रम में जैव विविधता को बनाए रखना पारिस्थितिकी तन्त्र के लिए प्रभावी कदम है। इसके लिए इसके कार्यक्रमों एवं गतिविधियों में वर्ष 2013 में कई नए-नए आयाम भी जुड़े हैं।

इस सम्बन्ध में जलवायु परिवर्तन को रोकने के सम्बन्ध में कई महत्वपूर्ण सुरक्षात्मक उपाय निम्न हैं-

- जीवाश्म ईंधन के उपयोग में कमी की जाए।

- पेड़ों को बचाया जाए एवं अधिक से अधिक वृक्षारोपण किया जाए।
- प्लास्टिक जैसे अपघटन में कठिन व असम्भव पदार्थों का प्रयोग न किया जाए।
- प्राकृतिक ऊर्जा के स्रोतों को अपनाया जाए, जैसे-सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि।

19.8 सारांश

पर्यावरण और सतत् मानव विकास के बीच एक बेहतर जीवन जीने के लिए इनके बीच सम्बन्धों का अध्ययन आवश्यक है। पर्यावरण मानव जीवन को किस प्रकार प्रभावित करते हैं तथा उसके विकास में क्या भूमिका अदा करते हैं। इसे हम सतत् विकास के माध्यम से देख सकते हैं। पर्यावरण में संसाधनों के माध्यम से विश्व के सभी लोगों को बढ़ने का समुचित अवसर प्राप्त होता हैं। प्रत्येक प्राणी को जीवित रहने के लिए कुछ विशिष्ट परिस्थितियों की आवश्यकता होती है जिसके माध्यम से वह अपना विकास सम्पन्न करता है।

प्राचीन काल से ही पर्यावरण हमारे चिंतन का विषय रहा है। आज समूचे विश्व में पर्यावरण एक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दा बना हुआ है। प्रत्येक देश के प्रतिनिधि पर्यावरण जैसे गम्भीर मुद्दे को लेकर चिंतित भी दिखाई दे रहे हैं।

पर्यावरण प्रदूषण की समस्या आज एक चिन्तनीय विषय है जिसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर दूर करने का विचार किया जा रहा है। इस प्रकार पर्यावरण विकास के लिए ऐसी आवश्यकता बन चुका है जिससे लोगों को जीवन स्तर सुधारने का मौका मिल सकता है। पर्यावरण संरक्षण के विभिन्न प्रयासों को लेकर आज काफी जोर-शोर हो रहा है। पर्यावरणविद्, वैज्ञानिक, सामाजिक कार्यकर्ता, स्वयं सेवी संस्थाएँ सभी पर्यावरण के प्रति चिंतित हो रहे हैं तथा पर्यावरण सुधार और संरक्षण के लिए विभिन्न उपाय सुझा रहे हैं। किन्तु कोई भी सार्वजनिक प्रयास तभी मुखर हो सकता है जब वह किसी प्रभावशाली व्यक्तित्व के नेतृत्व में तथा किसी विवेकशील सम्मानित, समर्पित तथा जनप्रिय के हाथों में हो।

आज प्रजातंत्र का युग होने के कारण प्रत्येक उभरता विषय जन समस्या तथा राजनीति का रूप लेती जा रही है। पर्यावरण प्रदूषण के सापेक्ष सरकारी उपेक्षा तथा इसके विपरीत कुछ जागरूक लोगों की पर्यावरण संरक्षण के प्रति व्यक्तिगत भागीदारी के उत्पन्न हो जाने के कारण पर्यावरण भी राजनीति का अभिन्न अंग बन रहा है। पर्यावरण से संबंधित राजनीति राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर काफी प्रभावशाली होती जा रही है।

पर्यावरण की राजनीति के अन्तर्गत पर्यावरण संरक्षण से संबंधित विभिन्न सम्मेलन, आन्दोलन, जन समर्थन तथा अन्तर्राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर इसका विभिन्न प्रकार से इस्तेमाल हुआ है। कभी इसे जन सुधार के लिए जनांदोलन के रूप में लिया तो कभी संसदीय स्तर पर लिया गया है।

संयुक्त रूप से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण संरक्षण के प्रयास और राजनीति संयुक्त रूप से प्रयास के तौर पर 1992 में प्रथम पृथ्वी शिखर सम्मेलन स्टाकहोम में आयोजित किया गया। संभवतः यह संयुक्त रूप से विकसित व विकासशील देशों का पर्यावरण संरक्षण के लिए पहला राजनीतिक प्रयास था।

19.9 सम्बन्धित प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. पर्यावरण का अर्थ क्या है? मानव जीवन के विकास में इसका क्या योगदान है वर्णन कीजिए।
2. प्रदूषण का अर्थ एवं प्रकार बताइए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सतत् मानव विकास से आप क्या समझते हैं?
2. पर्यावरणीय राजनीति का मानव जीवन पर प्रभाव का वर्णन कीजिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न-1 प्रथम पृथ्वी शिखर सम्मेलन का आयोजन हुआ?

(अ) 1919 (ब) 1972 (स) 1982 (द) 2000

उत्तर -(ब)

प्रश्न-2 कौन-सी गैस वायुमण्डल में रक्षा कवच का कार्य करती है।

(अ) नाइट्रोजन (ब) ऑक्सीजन (स) कार्बन (द) ओजोन

उत्तर (द)

19.10 संदर्भ सूची

1. पर्यावरण प्रशासन एवं मानव-डा0 राकेश कुमार शर्मा परिस्थितिकी-राजस्थान ग्रन्थ एकेडमी जयपुर, 2007।
2. विश्व विकास प्रतिवेदन, विकास एवं पर्यावरण विश्व बैंक।
3. पर्यावरण की राजनीति-लता जोशी-अनामिका पब्लिकशर्स-2001।
4. समकालीन भारत का परिचय - मनोज सिन्हा ओरियंट ब्लैकस्वॉन।
5. मानवाधिकार जेन्डर एवं पर्यावरण - तपन बिसावाल।
6. भारत की सामाजिक समस्याएं - सुनील कान्त भट्टाचार्य - राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली-2004।
7. राजनीतिक चिन्तन की रूपरेखा - ओ.पी. गाबा।
8. पर्यावरण संरक्षण एवं वानिकी - बी.एस.सक्सेना, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर-2007।
9. पर्यावरण अध्ययन-अमित कुमार विश्वभारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली-2006।

इकाई-20

नारी अधिकार एवं आन्दोलन

इकाई की रूपरेखा

20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.2 नारी अधिकार

20.2.1 संयुक्त राष्ट्र और नारी अधिकार

20.2.2 अन्तर्राष्ट्रीय अधिकार एवं नारी अधिकार

20.2.3 भारत में नारियों को संवैधानिक अधिकार

20.3 नारी अधिकारों का हनन्

20.4 नारी आंदोलन

20.5 भारत में नारी आंदोलन

20.6 सारांश

20.7 बोध प्रश्न

20.0 उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत नारी अधिकारों एवं नारी – आन्दोलन पर चर्चा की गयी है। इसका उद्देश्य–

- नारी–अधिकारों के विषय में जानकारी उपलब्ध कराना है।
- नारी–आंदोलन के विषय में प्रकाश डालना है।
- इस संदर्भ में समालोचनात्मक समझ विकसित कराना है।

20.1 प्रस्तावना

दुनिया भर के समाजों में महिलाओं की स्थिति पुरूषों के समक्ष दयनीय रही है। आज जो उन्हें प्रस्थिति प्राप्त है उसके लिए उन्हें कड़ा संघर्ष करना पड़ा है और एक लम्बी लड़ाई लड़नी पड़ी है। संयुक्त राष्ट्र, अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में नारी अधिकार एवं भारत में संविधान के अन्तर्गत महिलाओं को किस प्रकार से पुरूष के समकक्ष समानता दी गई तथा समाज में आज उनकी क्या भूमिका है इसका उत्तर जानना आवश्यक है।

नारी अधिकारों की रक्षा हेतु विश्व स्तर पर नारी आंदोलन भी हुए है जिसका समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा है एवं भारतवर्ष में भी नारी आंदोलनों का महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसमें विकास के समुचित अवसरों, समान अधिकारों, कानूनी अधिकार, अन्याय का विरोध, शिक्षा के अवसर, जैसे मुद्दों को उठाया गया है एवं व्यापक स्तर पर विभिन्न समुदायों में भी इसकी माँग की गयी। इस आंदोलन में समाज सुधारकों ने भी अमूल्य योगदान दिया है।

अधिकांशतः देखा जाता है कि शोषण और दमन का व्यवहार वर्ग, लिंग, भाषा, जाति के आधार पर किया जाता है। इस संदर्भ में महिलाओं की स्थिति बहुत शोचनीय है। समाज में महिलाओं को सदैव शोषण का शिकार होना पड़ता है। आज महिलाएं समाज में अपनी विभिन्न–विभिन्न भूमिकाओं का निर्वाह कर रही हैं जैसे डॉक्टर, इंजीनियर, मैनेजर, वकील, अध्यापिका आदि। परन्तु महिलाओं के कार्यो को सरल एवं कम महत्वपूर्व समझा जाता है। विकास सम्बन्धी कार्यो, सफल योजनाओं के निर्माण तथा समायोजन में उनकी भूमिका को महत्व नहीं दिया जाता है। योजनाओं के निर्माण में उनसे परामर्श नहीं लिया जाता है। पुरूषों के समकक्ष उन्हें कमजोर माना जाता है। समान कार्य के लिए महिलाओं को समान वेतन नहीं दिया जाता है। उनको घरेलू हिंसा का शिकार होना पड़ता है। महिलाओं को उच्च पदों पर देखने में तथा पुरूषों को महिलाओं के अधीन कार्य करने में दोनों के बीच अहं का टकराव भी देखने को मिलता है। कई स्थानों पर महिलाएं निम्न स्तर की नौकरियों तथा कम वेतन पर कार्यरत है।

महिलाओं के साथ लिंग के आधार पर उनके खान–पान में भी भेदभाव किया जाता है। समान अधिकारों के बावजूद उनसे भेदभाव किया जाता है। यद्यपि संविधान में महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकार तथा स्वतन्त्रता प्राप्त है परन्तु व्यवहार में इनके बीच भेदभाव किए जाते हैं। भारत वर्ष में अशिक्षा तथा पिछड़ापन महिलाओं के शोषण का मुख्य कारण रहा है।

हिंसा, संचार साधनों का अभाव, ढीली–ढ़ाली कानून व्यवस्था तथा समाज में मूल्यों का पतन जैसे कारणों ने महिलाओं के विरूद्ध अपराधों को बढ़ावा दिया है। परन्तु आज महिलाओं को सशक्त एवं सुरक्षित बनाने की आवश्यकता है इसके लिए उन्हें स्वयं भी जागरूक रहना होगा।

दुनिया भर में महिलाओं के लिए बहुत से आंदोलन चलाये गये लेकिन उनकी स्थिति में अपेक्षित परिवर्तन नहीं देखा जा रहा है। महिलाओं के प्रति अत्याचार एवं अपराध बढ़े हैं। महिलाओं की सबसे बड़ी विवशता या त्रासदी यह है कुछ अपवादों को छोड़कर स्त्री की भूमिका अपनी जरूरतों के आधार पर घर में पुरूष या समाज की व्यवस्था तय करती है। वस्तुतः पुरूष सत्तात्मक समाज की नियति है।

आज समाज में महिलाओं को अपनी सुरक्षा करना एक महत्वपूर्ण चुनौती बन गयी है। महिलाओं ने आधुनिक समाज में अपनी आजादी की कीमत सुरक्षा से चुकाई है। आधुनिक समाज में स्त्रियों को केवल बोलने की अनुमति दी है निर्णय करने का अधिकार नहीं दिया है। वही महिलाएं भी उतना ही बोलती है जितनी आश्यकता है।

शिक्षा के उचित अवसर प्रदान कर उनकी स्थिति में बदलाव लाया जा सकता है। जीवन मूल्यों के प्रति घटती हुई आस्था, पारिवारिक परम्पराओं की उपेक्षा से भी महिलाओं के समक्ष नयी चुनौतियां उत्पन्न की है। एक तर्क यह भी है कि महिलायें ही महिलाओं की दुश्मन है। परिवार में महिलाओं का महिलाओं के क्रूर आचरण बहू, सास, ननद के मुद्दे भी महिलाओं की शोचनीय स्थिति में सहायक रहे हैं।

20.2 नारी–अधिकार

20.2.1 संयुक्त राष्ट्र और नारी अधिकार

संयुक्त राष्ट्र के उद्‌घोषणा पत्र में मानवाधिकारों की स्पष्ट व्याख्या की गयी है जिसके आधार पर स्त्री पुरूष को समान अधिकार देते हुए दोनों की गरिमा और स्वतन्त्रता तथा मानवता एवं समान जीवन जीने की घोषणा की गई है। इन अधिकारों को किसी भी स्थिति में किसी के द्वारा नहीं छीना जा सकता है। इस घोषणा पत्र में महिलाओं को किसी आधार पर, जैसे–धर्म, जाति, भाषा, सम्पत्ति आदि के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता है। नारियों को वे समस्त अधिकार प्राप्त हैं जो उनमें स्वतंत्र एवं सामान्य जीवन के लिए आवश्यक है और साथ ही जो उनके व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करने सक्षम है। महिलाओं को अपने अधिकरों के लिए लम्बा संघर्ष करना पड़ा है। प्रजातांत्रिक प्रवृत्तियों के बढ़ने के स्पथ सामन्ती प्रवृत्तियों का विस्तार होता गया। जैसे–जैसे प्रजातांत्रिक मूल्यों को स्थान मिलता गया वैसे –वैसे महिलाओं के अधिकारों के प्रति संवेदना में तीव्रता आती गयी। अधिकारों की स्थापना की एक लम्बी ऐतिहासिक यात्रा रही है। अधिकारों की मान्यता वैयक्तिक स्तर से राष्ट्रीय स्तर तथा राष्ट्रीय से अन्तर्राष्टीय स्तर तक गतिशील रही है। 1945 में अधिकारों को अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता मिली इसे मानवाधिकार का सार्वभौमिक घोषणा–पत्र कहा गया। इसमें महिलाओं एवं पुरूषों में कोई भेद स्थापित नहीं किया गया था इसी के साथ महिलाओं के प्रति सोच में क्रांतिकारी प्रवृत्ति को जन्म दिया। आगे चल कर इस प्रवृत्ति ने महिला सशक्तिकरण की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका को जन्म दिया

1970 के दशक में पूरे विश्व में जगह–जगह पर नारी आंदोलन हुए जिसमें लैंगिक असमानता के कारण न्याय एवं मानव अधिकारों के लिए नारीवादी दृष्टिकोण को उठाया गया और उनके साथ होने वाले अन्याय के विरूद्ध एवं भेदभाव को समाप्त करने के लिए आंदोलन चलाए गये। क्योंकि उस समय विश्व में नारियों के साथ होने वाली हिंसा, अत्याचार, लैंगिक असमानता का स्तर सबसे अधिक था जिस कारण कानून में उनको समान दर्जा देने के लिए और समाज में एक सम्मानित सदस्य के रूप में मान्यता दिए जाने की माँग की गयी। इसके फलस्वरूप नारी आंदोलन की शुरूआत हुई ।

20.2.2 अन्तर्राष्ट्रीय अधिकार एवं नारी अधिकार

1979 में एक ऐतिहासिक घटना हुई जिसमें महिला के विरूद्ध होने वाले अन्याय एवं भेदभाव को समाप्त करने के लिए विश्व स्तर पर एक समझौता हुआ। नारी अधिकार की सुरक्षा के लिए इसे अन्तर्राष्ट्रीय बिल का नाम दिया गया। इसे CEDAW (The International Bill of Women right) के नाम से भी जाना जाता है। इसमें भारत सहित कई राष्ट्रों ने आपसी सहमति से हस्ताक्षर किए और इसे मानव अधिकारों का संधि पत्र कहा गया।

प्रायः महिला अधिकारों के विरूद्ध सभी क्षेत्रों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आधारों पर भेदभाव होता है इसलिए इस प्रावधान में इन सभी क्षेत्रों को सम्मिलित किया गया। समझौते के अन्तर्गत माना गया कि सभी देशों का यह दायित्व होगा कि वे इसमें उल्लिखित नारी अधिकारों की रक्षा का सदैव प्रयास करेंगे।

20.2.3 भारत में नारियों को संवैधानिक अधिकार

भारत में नारी अधिकारों के लिए बहुत लंबा संघर्ष चला है और उनके अधिकारों की रक्षा के लिए बड़े–बड़े समाज सुधारकों ने भी योगदान दिया है जैसे प्राचीन काल से

चली आ रही सती प्रथा, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा, लैगिक असमानता आदि। इन कुप्रथाओं को धीरे–धीरे सामाजिक सुधारों एवं कानून के माध्यम से दूर करने का प्रयास किया गया।

भारतीय संविधान में कुछ महत्वपूर्ण अनुच्छेद हैं जिसके आधार पर महिला अधिकारों को सुरक्षा प्रदान की गई है, जैसे–

1. अनुच्छेद–14 विधि के समक्ष समानता
2. अनुच्छेद–15 धर्म, वंश, जाति, लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जायेगा।
3. अनुच्छेद –16 अवसरों की समानता।
4. अनुच्छेद–21 प्राण और दैहिक स्वतन्त्रता के अधिकारों का समर्थन करता है एवं स्त्री–पुरूष को समान रूप से संरक्षण प्रदान करता है।
5. अनुच्छेद–38 जनकल्याण हेतु सामाजिक, राजनीतिक न्यायिक संरक्षण प्रदान करता है।
6. अनुच्छेद–39 महिलाओं को पुरूषों के समान जीविका के अवसर प्रदान करता है।

इस प्रकार भारतीय संविधान ने समाज में महिलाओं की स्थिति को मजबूत बनाने के लिए मूल–अधिकारों एवं स्वतन्त्रता, समानता के अधिकारों का समर्थन करता है समाज में सभी नागरिकों को लैंगिक आधार पर न्याय प्रदान करता है एवं कानूनी आधार पर अधिकरों को मान्यता प्रदान करते हुए नारी स्थिति में सुधार के प्रयास करता है । इसके लिए बाल विवाह अधिनियम (1992), सती प्रथा निवारण अधिनियम (1987) विवाह अधिनियम (1954), समान वेतन अधिनियम (1976), दहेज निवारण अधिनियम (1961), प्रसूति सहायता अधिनियम (1961), चलचित्र (सेंसर) अधिनियम (1986), घरेलू हिंसा अधिनियम (2006) जैसे अधिनियमों का निर्माण करके संविधान में कानूनी व्यवस्था के माध्यम से नारी अधिकारों को संरक्षण प्रदान किया गया है। इन सबका लक्ष्य नारी गरिमा को स्थापित करना है।

20.3 नारी अधिकारों का हनन

विश्व की कुल जनसंख्या का लगभग आधा भाग महिलाओं का है। समाज के विकास एवं निर्माण के लिए स्त्री –पुरूष दोनों की सहभागिता आवश्यक है पर इस स्थापित सत्य के बावजूद भी दुनिया भर के प्रत्येक समाज में महिलाओं की स्थिति सोचनीय बनी रही है। पुरूष सत्तात्मक समाज ने उनको एक वस्तु समझा और तदनुसार उसके साथ व्यवहार किया। भौतिक सभ्यता के विकास में महिलाओं के प्रति सोच को और भी वीभत्स रूप दिया।

इस पूरे विश्व में नारियों पर होने वाले अत्याचारों व अपराधों के पीछे उनका आर्थिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़ापन रहा है सदियों से नारी अधिकारों का हनन होता रहा है जो कि कई –कई रूपों में हमारे सामने आता रहा है जैसे –

1. सती प्रथा का प्रचलन होना इसमें पति की मृत्यु के पश्चात् स्त्रियाँ उनकी चिता के साथ जलने को मजबूर की जाती थीं। इस प्रथा को धर्म से जोड़कर और भी अधिक उन्मादी रूप दे दिया जाता था वस्तुतः यह एक अमानवीय प्रथा थी। इसी प्रकार पर्दा–प्रथा, बहु– विवाह, बेमेल विवाह, वेश्या–प्रथा आदि का मान भी लिए जा सकता है। इसमें नारियों की स्थिति अत्यन्त दयनीय बन गयी है।
2. भ्रूण हत्या का होना लड़कियों को जन्म से पूर्व ही गर्भ में ही मार दिया जाता हैं। स्त्रियों को जबरदस्ती इस जघन्य अपराध के लिए मजबूर किया जाता है। भ्रूण

हत्या का परिणाम यह है कि सभी देशों में लड़कियों का प्रतिशत दिन प्रतिदिन घटता जा रहा जा रहा है। वस्तुतः यह मानव सभ्यता का सबसे अधिक दुःखद पहलू है।

3. महिला अधिकारों का हनन आए दिन होने वाले बलात्कार और यौन–उत्पीड़न के माध्यम से होता है जिसका ग्राफ बढ़ता ही जा रहा है।

4. महिला अधिकारों का हनन पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों को कम वेतन दिया जाना भी है।

5. दहेज की समस्या भी बहुत महत्वपूर्ण सामाजिक समस्या रही है। जिसमें दहेज–उत्पीड़न के साथ ही साथ महिला मृत्यु भी एक प्रकार से नारी अधिकारों का हनन है।

6. महिलाओं को अवसरों की समानता न मिलने से उनकी क्षमताओं का सही उपयोग नही हो पाता है फलस्वरूप उनके अधिकारों का हनन होता है।

20.4 नारी आंदोलन

किसी सामाजिक समस्या को दूर करने के लिए विशाल जनसमुदाय द्वारा किया गया सामूहिक प्रयत्न सामाजिक आंदोलन कहलाता है। महिलाओं की स्थिति को सुधारने के लिए इसी प्रकार का व्यक्तिगत एवं सामुहिक प्रयत्न किया जाता रहा है। इसे ही नारी आन्दोलन का नाम दिया गया।

भारत में समाज परिवर्तन की दिशा में इसी सामाजिक आन्दोलन का एक हिस्सा नारी आन्दोलन के रूप में आया।

वर्तमान में हम किसी भी समाज के विकास का आधार उस समाज में महिलाओं की स्थिति के आधार पर लगा सकते हैं। जो समाज जितना ही अपने समाज में नारियों को आदर सम्मान देता है तथा उसकी गरिमा के सुरक्षोपाय सुनिश्चित करता है वह समाज उतना ही सभ्य समझा जाता है। सदैव ही स्त्री एवं पुरूष को गाड़ी के दो पहियों के समान माना जाता रहा हैं इसमें दोनों की भूमिका समाज में परस्पर पूरक की है। किसी की भी भूमिका किसी दूसरें से कमतर नहीं है।

प्राचीन काल से ही स्त्रियों को पुरूषों द्वारा अपनी सम्पत्ति का हिस्सा माना जाता रहा है और उसी के आधार पर उनसे व्यवहार भी किया जाता रहा है। लड़कियों को जन्म से ही यह शिक्षा दी जाती है कि वो सदैव ही पुरूषो के अधीन है चाहे वो पिता हो या भाई या फिर पति के रूप में हो। स्त्रियों को लैंगिक भेदभाव के कारण ही निम्न दर्जा दिया जाता है।

सम्पूर्ण विश्व में महिलाओं लगभग आधी आबादी है लेकिन फिर भी उनको समानता का दर्जा प्राप्त नहीं है। स्वामी विवेवकानन्द जी का मानना था कि 'जो देश स्त्रियों का सम्मान नही करता है, वह कभी भी न तो महान बन सकता है और न ही भविष्य में कभी बन पाएगा'।

विश्व में लैंगिक भेदभाव और अन्याय के विरूद्ध महिलाओं ने आंदोलन किए गए हैं। उन्होंने अपने प्रति होने वाले अन्याय, अत्याचार व हिंसा का विरोध किया है और समाज में विकास के समुचित अवसरों, समान अधिकारों, कानूनी अधिकार की मांगे भी की है। महिलाओं में अब शिक्षा के माध्यम से काफी जागरूकता भी बढ़ी है और उनके द्वारा अपने अधिकारों के संघर्ष को नारीवाद के रूप में मान्यता भी मिली है।

नारीवादी मुख्यतः पुरूष प्रधान समाज में स्त्रियों के अधिकारों को पुरूषों के समान स्थापित करने की माँग करता है। सामाजिक विकास के साथ समाज में स्त्रियों को समान अधिकार प्रदान करने की माँग करता है। ऐसी सोच का विरोध करता है जो स्त्रियों को पुरूष के अधीन रखने की माँग करता है।

नारीवाद अब वैश्विक आंदोलन बन गया है जो महिलाओं के हितों की बात करता है एवं उनमें जागरूकता पैदा कर अत्याचार के विरूद्ध लड़ने के लिए सचेत करता है। महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, शिक्षा आदि के क्षेत्रों में बराबरी का स्थान मिले और सभी क्षेत्रों में महिलाओं को समान अवसर मिले। यही नारीवादी आंदोलन का प्रयास रहा है। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नारी के विकास एवं महिला आंदोलनों को प्रोत्साहन भी दिया गया है और संयुक्त राष्ट्र संघ ने इस विषय पर राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय मंच का निर्माण भी किया है।

यद्यपि स्त्रियों को कानूनी रूप से अधिकार प्राप्त है परन्तु उनके साथ फिर भी भेदभाव किया जाता है और उनकी उपेक्षा की जाती है। स्त्री–पुरूष के बीच लैंगिक असमानता ने नारीवादी आंदोलन को विचारधारात्मक रूप प्रदान किया है।

नारीवाद की चिंता सदैव समाज में महिलाओं की स्थिति से रही है। नारीवाद के अनुसार, आज के इस वैज्ञानिक युग में स्वास्थ्य, शिक्षा व्यवसाय में अवसरों की समानता से यह प्रमाणित हो चुका है कि स्त्री–पुरूष की क्षमता, मानसिक क्षमता, बुद्धि, योग्यता के आधार पर स्त्री–पुरूष के बीच कोई अंतर नहीं है।

आज महिलाओं ने अपने उत्तरदायित्वों को निभाते हुए प्रत्येक अवसरों जैसे खेल–कूद व्यवसाय, शिक्षा, चिकित्सा आदि के क्षेत्र में अपनी क्षमता का प्रर्दशन किया है और राष्ट्रीय स्तर पर ही नही बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अपनी ख्याति अर्जित की है। इससे यह सिद्ध होता है कि महिला आज कमजोर नहीं बल्कि हर स्थिति में सबल है उसको प्रकृति ने अद्‌भुत क्षमता प्रदान की है जिससे अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकती है।

20.5 भारत में नारी आंदोलन

भारतीय समाज में नारियों को स्थिति विभिन्न युगों में अलग–अलग रही है। उनको भारतीय समाज में शक्तिस्वरूप लक्ष्मी, ज्ञान की देवी सरस्वती के रूप में पूजा जाता रहा है। वैदिक युग में भी नारियों की उच्च स्थिति रही है। परन्तु उत्तर वैदिक काल में इसमें परिवर्तन आया और नारियों की उच्च स्थिति में बदलाव आ गया है। मध्यकाल में मुस्लिम आक्रन्ताओं से हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए स्त्री के सतीत्व की रक्षा हेतु नियमों को कठोर बना दिया गया।

नारी आन्दोलन में भारतीय समाज सुधारकों जैसे राजा मोहन राय ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। 19वीं, 20वीं शताब्दी में समाज सुधारकों ने सुधार आन्दोलन को अहम् हिस्सा बनाया। नारी सुधार की दिशा में बाल विवाह, सती प्रथा का विरोध तथा स्त्री विधवा विवाह, शिक्षा आदि का समर्थन किया।

19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मुस्लिम समुदाय में भी नारी सुधार आन्दोलन का प्रारम्भ हुआ। नारी सुधार के लिए सामूहिक प्रयासों के साथ ही कुछ व्यक्तिगत प्रयास भी किए गये जैसे कलकत्ता में कलकत्ता तरूण स्त्री सभा, पण्डिता रमाबाई द्वारा 'पूना सेवा सदन विधवा आश्रम की स्थापना की गई।

नारी अधिकार आन्दोलन में आजादी से पूर्व भी स्त्रियों ने स्वदेशी आन्दोलन, असहयोग आन्दोलन एवं सविनय आन्दोलन में भाग लेकर सक्रिय भूमिका का निर्वाह किया। 20वीं शताब्दी में महिलाओं द्वारा महिला संगठनों की भी स्थापना की गई इसी दिशा में 'अखिल भारतीय महिला सभा' की स्थापना भी एक महत्वपूर्ण घटना थी। इन महिला संगठनों ने नारी मुक्ति आन्दोलन की प्रक्रिया को तेज किया और आन्दोलन के ढाँचे में परिवर्तन भी किए।

20वीं शताब्दी के आरम्भ में नारी आन्दोलन की जो नवीन प्रवृत्तियाँ सामने आयी है उसने नारियों के प्रति सोच में क्रांतिकारी परिवर्तन कर लिया फलतः नारी आन्दोलन को नयी गति मिली है गाँधी जी ने नारियों को राजनीतिक आन्दोलन में शामिल करने पर बहुत बल दिया था उनके आन्दोलनों में महिलाओं ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया। इससे उनकी चेतना का विकास देखने को मिला। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का जन्म समाज एवं कर्म सुधार आन्दोलनों का परिणाम था। इसलिए समाज–सुधार भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का सदैव अभिन्न अंग बना रहा। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन के नेताओं ने समाज की बुराईयाँ दूर करने के लिए सदैव दयानन्द सरस्वती, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, गाँधी, नेहरू, अम्बेडकर, सुभाष चन्द्र बोस, रानाडे, गोखले, तिलक आदि नेताओं का उल्लेख इस संदर्भ किया जा सकता है। इन सभी ने भारत में नारी–गरिमा को पुनः स्थापित करने पर बल दिया। अंग्रेजी –शिक्षा के प्रचार–प्रसार तथा पश्चात्य् मूल्यों का भारतीय समाज में प्रवेश ने भी महिलाओं में नई चेतना उत्पन्न करने में सहायक बनी और यहां के लोगों में महिलाओं के प्रति सोच में परिवर्तन किया। इससे परम्परागत व रूढ़िवादी सोच को गहरा धक्का लगा देश की आजादी मिलने पर इस दिशा में क्रातिकारी परिवर्तन देखने को मिला।

भारत में जनचेतना के विकास के साथ ही नारी आंदोलन का उदय हुआ। इस प्रकार सामाजिक न्याय की स्थापना एवं नारी शिक्षा पर बल देने के लिए विद्वान पुरूषों और समाज सुधारकों ने इस संदर्भ में रचनात्मक पहल की। समाज में धीरे–धीरे लोगों की विचारधारा में परिवर्तन होने लगा। लोग खुले दिमाग से सोचने लगे। नारी अधिकारों को मान्यता देने के लिए कानूनी प्रयास भी किए गये।

नारी आन्दोलन ने महिलाओं को परापरागत बंधनों से मुक्त करने के साथ ही उनको समानता के अवसर प्रदान करने एवं स्वयं को सिद्ध करने का अवसर प्रदान किया है। नारी आंदोलन के अन्तर्गत नारी स्थिति में सुधार के प्रयास किये गये।

भारतीय संविधान में भी महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने एवं सुरक्षा प्रदान करने के लिए विशेष प्रावधान भी किये गये हैं।

सामाजिक आन्दोलन को प्रेरित करने के लिए महिला अथवा नारी आंदोलन ने भी महत्वपूर्ण प्रयास किए जिसके द्वारा नारी आंदोलन को एक नई दिशा भी मिली जैसे गढ़वाल में चिपको–आन्दोलन बम्बई में मूल्य वृद्धि आंदोलन, बोधगया का मठ–आन्दोलन, महिला यौन उत्पीड़न एवं दहेज प्रथा के विरूद्ध आंदोलनों ने नारी–कल्याण एवं विकास हेतु सराहनीय योगदान दिये।

महिलाओं के विभिन्न मुद्दों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी मान्यता प्रदान की गई। इसके अतिरिक्त महिला अधिकारों एवं सकारात्मक प्रयास के लिए भारत में 1991 मे महिला आयोग की स्थापना भी की गई जिसका उद्देश्य महिला अधिकारों का संरक्षण है।

20.6 सारांश

नारी आंदोलन का उद्देश्य मुख्य रूप से महिलाओं के अधिकारों के हनन् को रोकने एवं सामाजिक न्याय की स्थापना हेतु प्रयास रहा है। इस दिशा में समाज–सुधारकों

राजनीतिक–नेताओं के प्रयास, संयुक्त राष्ट्र तथा स्वैच्छिक संगठनों आदि की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। इन सभी ने नारी–अधिकारों के प्रति महिलाओं को जागरूक कर उनकों सशक्त करने का प्रयास किया है।

नारी आंदोलन एक संगठित आन्दोलन के रूप में ने होकर अलग–अलग मुद्दों को लेकर गतिशील रहा है। जैसे यौन–उत्पीड़न बलात्कार, घरेलू हिंसा आदि मुद्दों का नाम लिया जा सकता है।

नारी आन्दोलन को समय–समय पर अनेक चुनौतियों का भी सामना करना पड़ा है। पुरूषों के लिए नारी आन्दोलन एक मजाक तथा पारिवारिक तालमेल के अभाव के रूप में भी रहा हैं। इनका तर्क है कि पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव के फलस्वरूप महिलायें अपने कर्त्तव्यों से विमुख हो गई है। उनके अनुसार नारी आन्दोलन परिवार के विरूद्ध जाने का दुःसाहस है।

पूर्व में महिलाएं अपने अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं थी परन्तु आज वो हर तहर से जागरूक हैं। परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि वे संगठित होकर इस दिशा में प्रयास करें।

वर्तमान में महिलाओं के साथ होने वाले अन्याय, घृणित अपराध तथा दामिनी और निर्भया जैसे अमानवीय घटनाओं को रोकने के लिए आवश्यक है कि उनका एक मजबूत संगठन हो जो पुरूषों एवं संकीर्ण मानसिकता वाले समाज को नई स्वस्थ सोच एवं नई दिशा प्रदान कर सकें। साथ ही महिला–अधिकारों को संरक्षण प्रदान मिल सकें। लोगों की सोच में बदलाव से ही महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन संभव है। एक स्वस्थ सोच ही स्वस्थ समाज का निर्माण कर सकता है पर इसके लिए महिलाओं को स्वयं आगे आना पड़ेगा उन्हें पुरूषों पर निर्भर न रह कर आत्म–निर्भर होना पड़ेगा और स्वयं आत्म –विश्वास पैदा करना होगा उन्हें अपना स्वयं बनाना होगा।

20.7 बोध प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय संविधान ने नारियों को कौन–कौन से संवैधानिक अधिकार प्राप्त है?
2. नारी–आन्दोलन का विकास किस प्रकार हुआ?
3. नारी–सुधार आन्दोलन के महत्व का मूल्यांकन कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. संयुक्त राष्ट्र में नारी अधिकार को किस प्रकार प्रधानता दी गयी है?
2. महिला–अधिकारों के हनन पर टिप्पणी लिखिए।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. किसी एक देश में महिलाओं को मतदान का अधिकार सन् 1971 में मिला?

   (क) आस्ट्रेलिया (ख) न्यूजीलैण्ड

   (ग) मैक्सिको (घ) स्विट्जरलैण्ड

2. महिलाओं के विरूद्ध सभी प्रकार के भेदभाव की समाप्ति के लिए अन्तर्राष्ट्रीय बिल पारित किया गया?

(क) 1948 (ख) 1979

(ग) 1999 (घ) 1993

3. नारियों के संवैधानिक अधिकार की सुरक्षा ''अवसर की समानता'' किस अनुच्छेद के अन्तर्गत प्रदान की गयी है?

(क) अनुच्छेद–14 (ख) अनुच्छेद–21

(ग) अनुच्छेद–39 (घ) अनुच्छेद–16

उत्तर –1. (घ), 2. (ख), 3. (घ)

20.8 संदर्भ ग्रन्थ

1. राजनीतिक सिद्धान्त की रूपरेखा –ओम प्रकाश गाबा, मयूर पेपर बैक्स, नोयडा, 2001.
2. मानवाधिकार और महिलाएं –डॉ. निशान्त सिंह, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2008.
3. समसामयिक राजनीतिक सिद्धान्त – नरेश दाधीच, रावत पब्लिकेशन, जवाहर नगर, जयपुर, 2014.
4. मानवाधिकार जेन्डर एवं पर्यावरण –डॉ. तपन बिसवाल, विनोद वाशिष्ठ, वाइवा बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, 2009
5. भारत की सामाजिक समस्याएं –सुनील कान्त भट्टाचार्या, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2004.

इकाई–21

मानवधिकार एवं अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति

इकाई की संरचना

21.0 इकाई का उद्देश्य

21.1 भूमिका

21.2 परिभाषा

21.3 अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति एवं मानवाधिकार

21.4 मानव अधिकार के तीन चरण

- 21.4.0 नागरिक – राजनीतिक अधिकार
- 21.4.1 सामाजिक आर्थिक अधिकार
- 21.4.2 सामूहिक–विकासोन्मुख अधिकार

21.5 अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार घोषणापत्र, नियम पत्र तथा संगठन

- 21.5.0 मानव अधिकारों का सार्वभौम घोषणापत्र 1948
- 21.5.1 आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय नियम पत्र
- 21.5.2 नागरिक तथा राजनीतिक अधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय नियम पत्र
- 21.5.3 महिलाओं के विरूद्ध हर प्रकार के भेदभाव के अंत के अन्तर्राष्ट्रीय नियम पत्र
- 21.5.4 बाल अधिकारों के नियम पत्र
- 21.5.5 अन्य–क्षम व्यक्तियों के अधिकारों के नियमपत्र

21.6 मानव अधिकार चुनौतियाँ

21.7 उपसंहार

21.8 शब्दावली

21.9 प्रश्न

21.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

21.11 नोट

21.0 इकाई का उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में मानव अधिकार की स्थिति पर चर्चा की गयी है। इसका उद्देश्य है–

1. मानव अधिकार के विषय में विद्यार्थियों को अवगत कराना
2. मानवाधिकार के अर्थ, प्रकृति तथा विषय क्षेत्र पर प्रकाश डालना
3. मानव अधिकार के विकास के विभिन्न पर्यायों तथा मानव अधिकार के समक्ष विद्यमान चुनौतियों पर चर्चा करना।

21.1 भूमिका

'लोगों के मानवाधिकारों का हनन उनकी मानवता को चुनौती है'

(नेल्सन मंडेला)

मानव के रूप में क्या अधिकार हों और किस सीमा तक किसी रूप में उनकी प्रत्याभूति शासन की ओर से हो इस सम्बन्ध में मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही विवाद चला आ रहा है। किसी व्यक्ति या समूह को उत्पीड़न मुक्त एवं यातनामुक्त जीवन–यापन का हक है। मानवाधिकार ऐसे ही सुसभ्य एवं सुसंस्कृत समाज की अवधारणा है। राजनीति विज्ञानी **हेरोल्ड लास्की (Harold Laski)** तो अधिकारों की परिभाषा देते हुए कहते हैं कि ''अधिकार तो जीवन की वे परिस्थितियां हैं जिनके बिना कोई व्यक्ति अपना पूर्ण विकास नहीं कर सकता'', मानव जाति अपने अधिकारों के लिए हमेशा संघर्ष करती आई है। इसके उदाहरण इतिहास में स्पष्ट देखने को मिलते हैं, जैसे 1215 का मैग्नाकार्टा, 1676 का बंदीप्रत्यक्षीकरण अधिनियम, 1689 का बिल ऑफ राइट्स, 1776 का अमेरिका का स्वतंत्रता घोषणापत्र तथा 1789 की फ्रांसीसी मानवाधिकारों की घोषणा ने भी मानवाधिकारों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। सामान्यतः मानव के मौलिक अधिकारों में जीवन का अधिकार, जीविका का अधिकार, वैचारिक स्वतंत्रता का अधिकार, समानता का अधिकार, स्वतंत्र रूप से धार्मिक विश्वास का अधिकार आदि पर चर्चा की जाती है।

मानवाधिकारों से तात्पर्य मनुष्य के उन अधिकारों से है जिसे वह अपने जन्म से ही प्राप्त करता है, और जो एक सामान्य जीवन जीने के लिए आवश्यक हैं। मानवाधिकार के विचार का उद्भव आधुनिक काल के उत्तरार्द्ध में प्राकृतिक अधिकारों के सिद्धांत से लिया जाता है। ऐसे सिद्धांतों का उद्भव राजनैतिक शक्ति प्राप्त मनुष्य के ऊपर कुछ सीमाएँ निर्धारित करने के लिए हुआ। हालाँकि अधिकार यदि राजनैतिक सत्ता के ऊपर नियंत्रक का कार्य करने लगे, तो वो 'विधि–पूर्व' कहे जायेंगे क्योंकि विधि का निर्माण राजनीतिक सत्ता द्वारा ही होता है। 17 वीं शताब्दी में **जॉन लाक (John Locke)** ने प्राकृतिक अधिकारों को तीन भागों में विभाजित किया। जीवन का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार और संपत्ति का अधिकार। **थॉमस जेफरसेन (Thomas Jefferson)** ने इन्हें जीवन, स्वतंत्रता और खुशी का अनुसरण कहा। ऐसे अधिकारों को प्राकृतिक कहा गया क्योंकि यह माना गया कि ये अधिकार मानव को स्वाभाविक रूप से प्रकृति से प्राप्त है। प्राकृतिक अधिकार सिर्फ नैतिक दावों के रूप में ही विद्यमान नहीं हैं बल्कि यह माना जाता है कि ये मनुष्य की मूल आंतरिक प्रेरणा को परिलक्षित करते हैं।

ऐतिहासिक रूप में देखा जाए तो 1215 के मैग्नाकार्टा घोषणापत्र को मानवाधिकार विमर्श का प्रारंभ माना जा सकता है। जिससे इंग्लैड के शासन जॉन ने अपने विरूद्ध छिड़े एक आंदोलन के बाद लागू किया था। उसके पश्चात 1789 में फ्रांसीसी क्रांति के बाद इंग्लैंड के विद्वान **थॉमस पेन (Thomas Pain)** की कृति **राइट्स ऑफ मैन (Rights of**

Man) इस विमर्श को एक सकारात्मक दिशा में ले गयी। आधुनिक समय में मानव अधिकारों के विमर्श को प्रारम्भ करने का श्रेय अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति **फ्रेंक्लिन डेलानो रूजवेल्ट (Franklin Delane Roosevelt)** को जाता है। 1941 में कांग्रेस को सम्बोधित करते हुए रूजवेल्ट ने चार मूल स्वतंत्रताओं की घोषणा की थी जिनमें वाक् स्वतंत्रता, अर्चन पूजन की स्वतंत्रता, अभाव से स्वतंत्रता तथा भय से स्वतंत्रता सम्मिलित थे। इसके पश्चात अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार को वैश्विक स्तर पर व्यापक बनाने की चेष्टा की गयी। 1948 में संयुक्त राष्ट्र के ध्वज तले **मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा (Universal Declaration of Human Rights)** की गयी जिसके तहत मानव अधिकार को राष्ट्रीय सीमाओं के परे रखा गया। इसमें विश्वभर के सभी राष्ट्रों के लोगों को एक समान अधिकार देने की बात कही गयी है। 1966 में **नागरिक एवं राजनैतिक अधिकारों नियम पत्र (International Covenant on Civil and Political Rights)** इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। समकालीन युग में मानव अधिकार का विमर्श विभिन्न दिशाओं में विस्तृत हुआ है जैसे नागरिक अधिकार, राजनीतिक अधिकार, आर्थिक अधिकार, महिला अधिकार, बाल अधिकार, अल्पसंख्यक अधिकार इत्यादि।

21.2 परिभाषा

मानव अधिकार की कोई सर्वमान्य विश्वव्यापी परिभाषा नहीं है। अति मौलिक स्तर पर कहा जा सकता है कि यह उन अधिकारों की तरफ इशारा करते हैं जो मनुष्य को मनुष्य होने के नाते प्राप्त होते हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो एक सभ्य समाज में जीवनयापन करने हेतु मनुष्य को जिन सामान्य पूर्वशर्तों की आवश्यकता है उन्हें मानव अधिकार के रूप में देखा जाता है।

एंड्रू हेय्वूड (Andrew Heywood) के अनुसार ये वैश्विक अधिकार हैं, जो प्रत्येक देश के नागरिकों को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार से अनेक विद्वानों का मत है कि मानव अधिकारों को राष्ट्र की सीमाओं से बांधे हुए रखना उचित नहीं है।

संयुक्त राष्ट्र उच्चायुक्त कार्यालय (United Nations High Commission) के अनुसार मानव अधिकार से हम उन अधिकारों की तरफ इशारा करते हैं जो प्रत्येक मानव में अन्तर्निहित हैं। जिनका उसकी राष्ट्रीयता, उसके निवास, लिंग, नस्ल, रंग, धर्म और किसी अन्य ओहदे से कोई सम्बन्ध नहीं है। हम सभी बिना किसी भेदभाव के, सामान्य रूप से अपने मानवाधिकारों के हकदार है।

21.3 अन्तराष्ट्रीय राजनीति एवं मानवाधिकार

कुछ दशक पहले तक मानव अधिकार को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति या अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध का विषय नहीं माना जाता था। इसका मुख्य कारण था मानवों का व्यक्तिओं के अधिकारों को राष्ट्रों का आंतरिक विषय माना जाना। साथ–साथ यह भी महत्वपूर्ण था कि अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध राष्ट्रों के बीच के संबंधों तथा राष्ट्र क्षेत्र से बाहर के विषयों को अध्ययन करता है। इस की मुख्य इकाई राष्ट्र को माना जाता था न कि उसके अभ्यंतर में निवास करने वाले व्यक्तियों को। पर द्वितीय विश्व युद्ध की विध्वंशकारी परिणामों के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के विद्वान, युद्धों को राष्ट्रों के अभ्यंतर में चल रहे विभिन्न क्रिया–कलापों तथा विचारों से जोड़ कर देखने लगे। इस प्रकार से जिम्बाब्वे में रोबर्ट मुगाबे एवं उत्तर कोरिया में द्वितीय किम जोंग जैसे तानाशाहों द्वारा अपने नागरिकों का दमन, अफगानिस्तान तथा गुंआतानामो खाड़ी में मुसलमानों पर हो रहे अत्याचार, चीन के तिआननमनचौक में छात्रों के शांतिपूर्ण आन्दोलन पर सरकार का गोला बारूद से हमला भी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन के विषय में स्थान पाने लगा।

सैद्धांतिक रूप से देखा जाए तो मानव अधिकार का अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन में प्रवेश एक क्रांतिकारी परिवर्तन से कम नही है। इसके कारण से पारंपरिक विश्लेषण के स्तर तथा विश्लेषण की इकाई में परिवर्तन देखने को मिलता है। समकालीन समय में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध राष्ट्रों के साथ साथ व्यक्ति, समूह तथा व्यक्ति से सम्बन्धित मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करता है।

व्यवहारिक तौर पर देखा जाए तो अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अन्तर्राष्ट्रीय घोषणापत्र, अन्तर्राष्ट्रीय नियम पत्र तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठन राष्ट्रों के विभिन्न आन्तरिक तथा वाह्य व्यवहारों को प्रभावित करने लगे हैं। आज मानव अधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा पत्र (International Bill of Human Rights) के द्वारा विश्व के विभिन्न राष्ट्रों पर संयुक्त राष्ट्र आधिकारिक रूप से विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा नागरिक अधिकारों को मान्यता देने का दवाब डाल रहा है। कोई भी राष्ट्र जो मानवाधिकार के घोषणापत्र या नियमपत्र का हस्ताक्षरकर्ता होने के बावजूद उनका उल्लंघन करता है, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उसे नकारात्मक अन्तर्राष्ट्रीय जनमत का सामना करना पड़ता है। उदाहरण स्वरूप, 1989 में चीन का तिआनानमेन नरसंहार जिसके तहत छात्रों की लोकतांत्रिक मांगों के शान्तिपूर्ण आन्दोलन को चीनी सरकार ने अति कठोर रूप से दमन किया था जिसके परिणामस्वरूप अनेक राष्ट्रों ने चीन से उच्च स्तरीय सम्बन्ध खत्म कर लिए। नकारात्मक अन्तर्राष्ट्रीय जनमत के कारण चीन को व्यापार में अत्यधिक क्षति उठानी पड़ी।

21.4 मानव अधिकार के तीन चरण

सन् 1979 में **चेक विहानकरेल वासक (Karel Vasak)** ने मानव अधिकारों को तीन युगों (three generations) में विभाजित किया। मानवाधिकार के इन तीन युगों या चरणों को हम फ्रांसीसी क्रांति के तीन सिद्धांतों स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के साथ पंक्तिबद्ध कर सकते हैं।

21.4.0 नागरिक–राजनीतिक अधिकार

सन् 1215 के माग्नाकार्टा से लेकर 1966 की नागरिक एवं राजनैतिक अधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय नियमपत्र तक मानवाधिकार रक्षण के विभिन्न उद्यमों को प्रथम चरण माना जाता है। इस समय मानव अधिकारों की प्रकृति सीमित थी। इन्हें केवल व्यक्ति की स्वतंत्रता और राजनीतिक कार्यों में उसकी प्रतिभागिता से सम्बंधित किया जाता था। यह अधिकार पूर्ण रूपेण व्यक्तिवादी और नकारात्मक हैं जिनका निर्माण व्यक्ति को राज्य से सुरक्षित करने के लिए हुआ है। इसके अंतर्गत धार्मिक, वैचारिक और विवेचन की स्वतंत्रता, सभा करने की स्वतंत्रता स्वैच्छिक संगठन निर्माण की स्वतंत्रता और समाज में राजनीतिक भागीदारी की स्वतंत्रता प्रमुख हैं। इन्हें नील अधिकार (Blue Rights) के रूप से जाना जाता है।

21.4.1 सामजिक आर्थिक अधिकार

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात मानव अधिकारों का दायरा मनुष्य की सामान्य आवश्यकताओं की ओर बढ़ाया गया। अब मानव अधिकारों को केवल नागरिक तथा राजनीतिक ही नहीं बल्कि सामाजिक तथा आर्थिक मापदंडों के अनुसार भी परिभाषित किया जाने लगा। इस युग में मानव अधिकारों को एक सकारात्मक रूप दिया गया जिसके तहत राज्य तथा सरकार को मनुष्य के व्यक्तित्व को परिपूर्ण बनाने में सहायक माना गया। नागरिक–राजनीतिक अधिकारों की भाँति ये भी मानव अधिकारों के वैश्विक घोषणापत्र में

अनुच्छेद 22 से 28 तक उद्धत हैं। सन् 1976 से क्रियान्वित हुआ। **आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों का अन्तर्राष्ट्रीय घोषणापत्र (International covenant no Economic Social and Cultural Rights)** इस दिशा में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इसके अंतर्गत आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य, आहार, काम, वाजिब मेहनताना, उचित जीवन स्तर इत्यादि अधिकार समाहित हैं इन्हें लाल अधिकार (Red Rights) के रूप से जाना जाता है।

21.4.2 सामूहिक–विकासोन्मुख अधिकार

1972 के स्टाकहोम घोषणापत्र (Stockholm Declaration) तथा 1992 के रिओ घोषणापत्र (Rio Declaration) के माध्यम से मानव अधिकार का विमर्श व्यक्ति अधिकार की सीमाओं को लाँघ कर अन्य दिशाओं में विस्तृत होने लगा है। अब मानव अधिकार के तहत वो अधिकार शामिल हो रहे हैं जो समूह तथा मानव समाज से संबंधित हैं । इन अधिकारों के तहत सामूहिक तथा गण अधिकार, आत्म–निर्धारण का अधिकार, आर्थिक तथा सामाजिक विकास का अधिकार, एक स्वस्थ परिवेश का अधिकार, प्राकृतिक संसाधनों का अधिकार, संचार सम्बन्धित अधिकार, सांस्कृतिक विरासत में भाग लेने का अधिकार, अर्न्तपीढ़ीन्याय तथा वहनीयता का अधिकार इत्यादि अधिकार समाहित हैं। इन्हें **हरित अधिकार (Green Rights)** के रूप में जाना जाता है।

21.5 अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार घोषणापत्र, नियम पत्र तथा संगठन

इकाई के इस भाग में अधिकार के कुछ विशेष घोषणापत्र, नियमपत्र तथा सगठनों के सम्बन्ध में जानकारी दी गयी है।

21.5.0 मानव अधिकारों का सार्वभौम घोषणापत्र 1948

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 1948 में मानवाधिकारों के सार्वभौम घोषणापत्र (UDHR) को राष्ट्रों के समक्ष प्रस्तुत किया। संयुक्त राष्ट्र का यह घोषणापत्र मानव समुदाय के सभी सदस्यों के लिए अन्तर्निहित गरिमा की बात करता है। द्वितीय विश्व युद्ध की महाविभीषिका को देखते हुए विश्व के प्रमुख राष्ट्र प्रमुखों ने विश्व को एक शांतिपूर्ण एवं सभ्य समाज की दिशा में ले जाने हेतु यह प्रयास किया था। राष्ट्र मुखियाओं की इस सोच को अटलांटिक चार्टर (1941) तथा संयुक्त राष्ट्रसंघ घोषणा (1942) से प्रेरणा मिली। इसके प्रथम अनुच्छेद के अनुसार सभी मनुष्य जन्म से स्वतंत्र हैं तथा अधिकार और मर्यादा में समान हैं।

21.5.1 आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय नियम पत्र

यह नियमपत्र 1966 में संयुक्त राष्ट्र महासभा के द्वारा प्रस्तुत किया गया। 1976 में इस नियम पत्र को संयुक्त राष्ट्र द्वारा संगृहीत गृहीत किया गया। यह नियम पत्र श्रमिकों के अधिकार, स्वास्थ्य के अधिकार इत्यादि अधिकारों के सम्बन्ध में है।

21.5.2 नागरिक तथा राजनीतिक अधिकारों के अन्तर्राष्ट्रीय नियम पत्र

यह नियम पत्र 1966 में संयुक्त राष्ट्र के महासभा द्वारा प्रस्तुत किया गया तथा 1976 से यह क्रियान्वित हुआ। यह जीवन जीने के अधिकार, धर्म के अधिकार, अभिव्यक्ति के अधिकार तथा मौलिक राजनीतिक अधिकारों से सम्बन्धित है।

21.5.3 महिलाओं के विरूद्ध हर प्रकार के भेदभाव को अंत के अन्तर्राष्ट्रीय नियम पत्र

यह नियमपत्र 1979 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा गृहीत किया गया। 1981 में यह नियमपत्र लागू किया गया। यह संयुक्त राष्ट्र संघ के विभिन्न राष्ट्रों को लिंग समानता के लिए कानून निर्माण करने के लिए बाध्य करता है।

21.5.4 बाल अधिकारों के नियम पत्र

1990 से यह नियमपत्र कार्यकारी हुआ। इसके द्वारा 18 वर्ष से कम आयु के नागरिकों के मानव अधिकारों के संरक्षण का दायित्व राष्ट्रों को सौंपा गया है।

21.5.5 अन्य–क्षम व्यक्तियों के अधिकारों के नियमपत्र

2008 में यह नियमपत्र कार्यकारी हुआ। इसके द्वारा अन्य –क्षम व्यक्तियों के मानव अधिकार के संरक्षण का दायित्व राष्ट्रों को सौपा गया है।

21.5.6 मानव अधिकार संबंधी संयुक्त राश्ट्र आयोग

मानव अधिकारों संबंधी संयुक्त राष्ट्र आयोग (यू.एन.सी.एच.आर.) संयुक्त राष्ट्र के प्रावधानों की रूपरेखा के अंतर्गत एक कार्यकारी आयोग है। यह संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक परिषद की एक सहायक इकाई है। संयुक्त राष्ट्र उच्च आयुक्त कार्यालय, मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए इस आयोग को समय–समय पर सहायता प्रदान करती है। अतः यह मानवाधिकारों के मूल्य तथा प्रयोग के संरक्षण के लिए संयुक्त राष्ट्र का प्रधान उपकरण तथा अन्तर्राष्ट्रीय मंच है।

21.5.7 मानव अधिकार के अन्तर्राष्ट्रीय संगठन

मानव अधिकार के अन्तर्राष्ट्रीय संगठन है जिसकी स्थापना 1961 में हुई। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चिन्हित मानव अधिकारों का प्रचार करना इस संगठन का मुख्य लक्ष्य माना जाता है। **ह्यूमन राइट्स वाच** भी एक अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार संगठन है जिसकी स्थापना 1978 में हुई थी। 1970 के दशक से मानव अधिकारों को राष्ट्रों के बीच चल रहे कुटनीतिक सम्बन्धों का एक अभिन्न अंग बना दिया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक तथा वित्तीय सहायता के लिए अमेरिका जैसे राष्ट्र मानव अधिकार पालन को एक आवश्यक शर्त के रूप में रखते हैं। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति जिमी कार्टर मानव अधिकार को लेकर एक अत्यंत जागरूक व्यक्तित्व माने जाते थे। यूरोपीय युनियन के सभी सदस्यों के लिए मानव अधिकारों का पालन एक महत्वपूर्ण शर्त के रूप में रखा गया है। इन राष्ट्रों के लिए मानव अधिकार का पालन केवल अधिकारों के संरक्षण में ही नहीं बल्कि उनके उल्लंघन नहीं होने देने के रूप में भी देखा जाता है।

21.6 मानव अधिकार के लिए चुनौतियाँ

समकालीन युग में मानव अधिकार पालन करने में कई चुनौतियाँ आती हैं।

(क) **राष्ट्र क संप्रभुता के साथ समझौताः** मानव अधिकारों का हनन राष्ट्रों की सीमा के अधीन होता है। कई बार राष्ट्र अपने सीमाओं में किसी भी तरह के अन्तर्राष्ट्रीय हस्तक्षेप को संप्रभुता के ऊपर आघात के रूप में देखते हैं।

(ख) **बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँः** आज विश्व में ऐसी अनेक बहु–राष्ट्रीय कंपनियाँ हैं जो अपने धन के वर्चस्व के कारण मानव अधिकार की आवाजों को दबाने में सफल हो रही हैं। मानव अधिकार की पैरवी करने वाले संगठनों के लिए यह एक महत्वपूर्ण चुनौती के रूप में उभर रही है।

(ग) **अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिः** मानव अधिकार का मुद्दा आज के समय में विकसित सशक्त राष्ट्रों के हाथ में एक शस्त्र बन गया है। इस के माध्यम से यह राष्ट्र अनेक समय पर विकासशील तथा क्षुद्र राष्ट्रों के ऊपर दबाव डाल कर अपनी बात मनवाने की कोशिश करते हैं।

(घ) **अन्तर्राष्टोय आतंकवादः** आज के युग में बोको हरम तथा आई.एस.आई.एस. जैसे आतंकवादी संगठन भी मानव अधिकारों के समक्ष एक महत्वपूर्ण चुनौती बन कर उभर रहे हैं।

21.7 उपसंहार

मानव अधिकारों के संरक्षण के बिना लोकतंत्र अर्थहीन है परन्तु मानव अधिकार को कोई सरल संकल्पना के रूप में देखा नहीं जा सकता है। विशेषतः अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जहां राष्ट्र समान स्तर पर एक दूसरे के समकक्ष नहीं हैं। अधिकतम समय पर मानव अधिकार संयुक्त राष्ट्रों के वर्चस्व को जाहिर करने में इस्तेमाल होते हुए मिलते हैं।

21.8 शब्दावली

मानव अधिकारः एक सभ्य समाज में जीवनयापन करने हेतु मनुष्य को जिन सामान्य पूर्वशर्तों की आवश्यकता है उन्हें मानव अधिकार के रूप में देखा जाता है।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँः एक ऐसी कंपनी जिसकी इकाई एक राष्ट्र तक सीमित न होकर विभिन्न राष्ट्रों में कार्य कर रही हों, जैसे मैकडोनाल्ड फूड चेन।

आम्नेस्टी इंटरनेशनलः विश्व भर में मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए कार्यरत एक ख्याति प्राप्त संस्था जिसकी स्थापना 1961 में हुई।

21.9 सन्दर्भ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के एक शब्द या एक वाक्य में उत्तर दें।

1. ''अधिकार तो जीवन की वे परिस्थितियाँ हैं जिनके बिना कोई व्यक्ति अपना पूर्ण विकास नहीं कर सकता'' उपरोक्त कथन किसका है?

   ....
   ....

2. मानवाधिकार दिवस कब मनाया जाता है?

....

....

3. मानवाधिकारों के लिए कार्यरत किन्हीं दो अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के नाम लिखिए?

....

....

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. मानवाधिकारों से आप क्या समझते हैं, परिभाषित कीजिये?

....

....

2. वर्तमान समय में मानवाधिकारों के समक्ष आ रही चुनौतियों पर एक संक्षिप्त लेख लिखिए?

....

....

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों का विस्तार में उत्तर दें–

1. करेल वासक के द्वारा मानवाधिकारों को किन श्रेणियों में विभाजित किया गया है? चर्चा करें।

....

....

2. मानव अधिकार के विशेष घोषणापत्र, नियमपत्र तथा संगठनों के बारे में एक लेख लिखें।

....

....

21.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

- एन. स्टामर्स, ह्यूमन राइट्स एण्ड सोसिअल मूवमेंट्स, प्लियुटो, 2009
- आर0जे0 विन्सेंट, ह्यूमन राइट्स एण्ड इन्टरनेशनल रिलेशंस, प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू जर्सी 1986
- ए. लिंक्लेटर, मेन एण्ड सिटिजेन्स इन द थिओरी ऑफ इन्टरनेशनल रिलेशंस, माकमिलान, लंदन, 1990
- जे. बेलिस, एस. स्मिथ, पी ओएन्स, ग्लोबलैजेसन आफ वर्ल्ड पालिटिक्स, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, 2011
- टी0 डन. जे. व्हीलर, ह्यूमन राइट्स इन ग्लोबल पालिटिक्स, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी कैम्ब्रिज, 1999

21.11 नोट

....

....

इकाई-22

अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद

इकाई की संरचना

22.0 इकाई का उद्देश्य

22.1 भूमिका

22.2 परिभाषा

22.3 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति

22.3.1 प्रथम चरण : सिद्धान्त या विचारधारा का निर्माण

22.3.2 द्वितीय चरण : एक सफल, नयी आवाज़

22.3.3 तीसरा चरण : अति अन्तर्राष्ट्रीयवाद

22.3.4 चतुर्थ चरण : धार्मिक चरण

22.4 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद की प्रकृति

22.5 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद के कारण

22.5.1 मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

22.5.2 वैचारिक दृष्टिकोण

22.5.3 सामरिक दृष्टिकोण

22.6 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद के उद्देश्य

22.7 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादी संगठन

22.8 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद की रोकथाम के लिए विश्व के देशों के बीच संधियाँ

22.9 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद की रोकथाम के उपाय

22.10 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद की रोकथाम के लिए विभिन्न देशों में गठित संस्थायें

22.11 उपसंहार

22.12 शब्दावली

22.13 सन्दर्भ प्रश्न

22.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

22.15 नोट

22.0 इकाई का उद्देश्य

इस इकाई के अन्तर्गत आतंकवाद की चर्चा अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में की गई है। इसका उद्देश्य है

(1) आतंकवाद का अर्थ, उसकी प्रकृति तथा उसके विषयों पर प्रकाश डालना।

(2) आतंकवाद के विकास के विभिन्न पर्याय तथा उसके उन्मूलन के उपायों के विषय में जानकारी देना।

(3) आतंकवाद का अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों एवं राजनीति पर होने वाले प्रभावों से अवगत करना।

22.1 भूमिका

आज आतंकवाद से संपूर्ण विश्व त्रस्त है। आतंकवाद से तात्पर्य सामान्यतः उन गतिविधियों से लिया जाता है, जो आतंक पर आधारित हैं। इसके विभिन्न रूप हो सकते हैं जैसे - बम विस्फोट, धमकी, अपहरण या रासायनिक हथियारों का प्रयोग इत्यादि। एक विचारधारा के रूप में आतंकवाद एक ऐसी विचारधारा है जो अपनी स्वार्थ सिद्धि और राजनैतिक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हिंसा, हर प्रकार की शक्ति तथा अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग में विश्वास रखती है। हिंसा के माध्यम से आतंकी अपनी सभी प्रकार की मांग एवं विचार को मनवाने, अपने लक्ष्यों को हासिल करने तथा किसी राजनैतिक व्यवस्था को ध्वस्त करने व उस पर अपना कब्जा या प्रभुत्व जमाने की चेष्टा करते हैं।

22.2 परिभाषा

आतंकवाद जिसका अंग्रेजी रूपांतरण ''टेररिज्म'' है, लैटिन भाषा के दो शब्द ''तेर्रेर'' (terrere) और ''देतेर्रे'' (deterre) से निष्पन्न है जिसका अर्थ डराने या धमकाने के लिए किये गये किसी कार्य के लिए उपयोग होता है।

चूँकि इसकी प्रकृति निश्चित नहीं है इसलिए आतंकवाद की सार्वभौमिक, सर्वसम्मत परिभाषा देना एक जटिल कार्य है। अमेरिकी राष्ट्रपति रीगन (Ronald Regan) के अनुसार ''आतंकवाद एक बर्बर कार्यवाही है जो भय की राजनीति करता है। आतंकवाद का समर्थन करने वाले लोग वहषी लोग है''। भारतीय विद्वान राम आहूजा (Ram Ahuja) के शब्दों में ''आतंकवाद हिंसा या हिंसा की धमकी के उपयोग द्वारा लक्ष्य-प्राप्ति के लिए संघर्ष या लड़ाई की एक विधि या

रणनीति है एवं अपने शिकार में भय पैदा करना इसका मुख्य उद्देश्य है। यह क्रूर व्यवहार है जो मानवीय प्रतिमानों का पालन नहीं करता''। ब्रायन जेनकिंसा (Bryon Jenkins) के मत में ''हिंसा की धमकी, व्यक्तिगत हिंसात्मक कृत्य और लोगों को आतंकित करने के उद्देश्य से हिंसा का विचार आतंकवाद है''। अमेरिकी रक्षा विभाग (US Department of Defence) के अनुसार ''अपने राजनैतिक, धार्मिक, और वैचारिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु हिंसा का उपयोग या हिंसा का भय दिखाना ताकि सरकार और समाज के भीतर डर का भाव पैदा किया जा सके, आतंकवाद है''। एफ.बी.आई. (F.B.I.) के अनुसार ''जनता या सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुँचाने के लिए बल या हिंसा का अवैध प्रयोग ताकि अपने राजनैतिक और सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु राज्य सत्ता को डराया या बाध्य किया जा सके आतंकवाद है'।

22.3 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति

सितम्बर 2001, आतंकवादी इतिहास के पृष्ठ का सबसे विध्वंसकारी दिन के नाम से जाना जाता है घटना की भीषणता का अंदाज इस बात से ही लगाया जा सकता है कि दिन दहाड़े कई हजार निर्दोशों की निर्मय हत्या कर दी गयी, आर्थिक क्षति और लोगों का भय तो गणना से परे था। तत्कालीन अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज डब्ल्यू बुश ने आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करते हुए कहा कि यह युद्ध तब तक चलेगा जब तक प्रत्येक आतंकवादी या संगठन जिसकी वैश्विक पहुँच है, उसे परास्त या समाप्त नहीं कर दिया जाता। हालाँकि यदि देखा जाये तो राष्ट्रपति बुश की यह घोषणा अनोखी नहीं है। 100 वर्ष पूर्व सितम्बर 11 के दिन ही किसी अराजक तत्व द्वारा राष्ट्रपति विलियम मैकिनले की हत्या के पश्चात उनके उत्तराधिकारी थिओडोर रूजवेल्ट ने भी आतंकवाद का समूल नाश करने के लिए एक विश्वव्यापी जंग का ऐलान किया था।

अमेरिकी विद्वान डेविड राप्पोर्ट (David Rappaport) ने आधुनिक आतंकवाद के चार चरण बताये हैं।

22.3.1 प्रथम चरण : सिद्धांत या विचारधारा का निर्माण

आधुनिक विश्व के आतंकवादियों को विरासत में एक ऐसा समाज मिला जिसमें क्रांतिकारियों की पारम्परिक कार्यशैली जैसे पैम्फलेट (पुस्तिका) या पर्चे बाँटना एकाएक पुराने या अप्रचलित से हो गये थे, एक नए संवाद के तरीके की आवश्यकता महसूस होने लगी थी, मीटर क्रोपोत्किन के शब्दों में कहें तो ए ''कार्य की वाचालता'' (प्रोपेगंडा बाय डीड) जरूरी होने लगी थी, एक ऐसा तरीका जो समाज में अपनी छाप भी छोड़े और कर्त्ता को इज्जत भी प्रदान करे क्योंकि विद्रोही या बागी कार्य में गहरी वचनबद्धता की जरूरत होती है और उसमें गहरे व्यक्तिगत जोखिम भी उठाने पड़ सकते हैं। प्रथम चरण को अराजकतावादी चरण भी कहा जाता है। ये आतंक के तरीके से परम्पराओं को ध्वस्त करने हेतु सबसे उपयोगी मानते हैं। ये सत्ता या राज्य को अपने बनाये गए नियमों के अनुसार कार्य करने पर विवश करना चाहते हैं। इनका मानना है कि इस प्रकार से समाज केन्द्रित हों जायेगा और जिससे क्रांति का मार्ग खुल जायेगा, और क्रांति संभव हो सकेगी। अन्तर्राष्ट्रीय आतंकी गतिविधियों का चरमोत्कर्ष 1810 का दशक माना जा सकता है जिसे ''हत्याओं का स्वर्णिम युग'' भी कहा जाता है, क्योंकि इस दौर में अनेक राजाओं, राष्ट्रपतियों और प्रधानमंत्रियों की हत्या करके आतंकी आसानी से अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं को लांघ कर खुले विचरण करते थे। उस दौर की सबसे प्रभावित सरकारों ने आतंकवाद से

निपटने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय पुलिस सहयोग व सीमा नियंत्रण की मांग की। समय को उपयुक्त समझते हुए अमेरिकी राष्ट्रपति रुजवैल्ट ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद के समाप्ति के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का आवाहन किया, परन्तु यह मंशा ज्यादा समय तक कामयाब न हो सकी और ऑस्ट्रियाई राष्ट्रनेता फर्डीनांड की हत्या ने प्रथम विश्व युद्ध को जन्म दिया।

22.3.2 द्वितीय चरण : एक सफल, नयी आवाज़

प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के उपरान्त हुई ब्रूसेल्स की संधि से दूसरे चरण की शुरुआत मानी जाती है। इस काल में प्रथम विश्व युद्ध में विजयी घटक राष्ट्रों द्वारा राष्ट्रीय स्वाभिमान के सिद्धांत का पालन करते हुए यूरोप भूभाग में साम्राज्यों को तोड़ने का कार्य प्रारंभ हुआ और उन्हें राष्ट्र संघ के अन्तर्गत लाने का प्रयास किया गया। परन्तु आतंक को रोकने की कोशिश द्वितीय विश्व युद्ध के आरंभ के साथ ही समाप्त हो गयी। आतंकवादियों को ज्यादातर कामायबी वर्साये संधि के लगभग 25 वर्षों बाद मिली। नए राज्यों जैसे इस्राइल, आयरलैंड, सायप्रस और अल्जीरिया के गठन में भी इसकी निर्णायक भूमिका रही। इस चरण में आतंकियों की कार्य पद्धति में परिवर्तन भी देखने को मिलता है। जहां पहले चरण में आतंकी राष्ट्राध्यक्षों की हत्याओं पर ध्यान केन्द्रित करते थे, इस चरण में यह थोड़ा और जटिल हो जाता है। इस चरण में राज्य सरकार की आँख-कान अर्थात् पुलिस को निशाना बनाया गया। पुलिसकर्मियों या उनके परिवार पर वार होने लगे और उन्हें मारा जाने लगा। आतंकवादी गुरिल्ला युद्ध तकनीक का भी प्रयोग करने लगे।

22.3.3 तीसरा चरण : अति-अन्तर्राष्ट्रीयवाद

तीसरे चरण का आरंभ वियतनाम युद्ध से है, वियतनाम युद्ध में पारंपरिक हथियारों के सम्मुख अति-आधुनिक अमेरिकी हाथियारों के समर्पण ने क्रान्तिकारी चिंतन में एक उम्मीद जगाने का कार्य किया कि यह आधुनिक व्यवस्था अभेद्य नहीं है, इस पर वार किया जा सकता है। कई पश्चिमी देशों में स्थित समूहों जैसे पश्चिम जर्मनी का रेड आर्मी समूह, इतालवी रेड ब्रिगेड, जापानी रेड आर्मी और फ्रेंच एक्शन दिरेक्टे ने स्वयं को तृतीय विश्व के लोगों का अग्रणी समझा। सोवियत संघ ने भी इनकी ट्रेनिंग तथा शस्त्रों के लिए खुला सहयोग प्रदान किया।

22.3.4 चतुर्थ चरण : धार्मिक चरण

धार्मिक तत्वों का आधुनिक आतंकवाद के प्रसार में एक महत्वपूर्ण योगदान रहा है, क्योंकि धार्मिक और नृजातीय अस्मिताएं एक-दूसरे को ढकने का काम करती हैं। आर्मेनिया, आयरलैंड, साईप्रस, फ्रांस, कनाडा, इजराइल और फलिस्तीनी संघर्ष इसे प्रमाणित करते हैं, हालाकि उपरोक्त सभी में इनका मकसद एक धर्मनिरपेक्ष राज्य का गठन था। परन्तु आज धर्म का एक दूसरा महत्व है, जो राज्य के कार्यान्वयन के सिद्धांत प्रस्तुत करता है। इस धार्मिक धारा ने अनेक विवादों को भी जन्म दिया है। श्रीलंका में बौद्धों द्वारा देश के रूपांतरण का प्रयास किया गया जिसने तमिलों को संगठित होकर एक संगठन बनाने के लिए मजबूर किया जिसके परिणाम स्वरूप लिट्टे (LTTE) अस्तित्व में आया, जिसकी मांग एक धर्मनिरपेक्ष राज्य गठन की थी। इस धार्मिक टकराव ने पूरे श्रीलंका को कई दशकों तक हिंसा की आग में झुलसाये हुए रखा। समकालीन युग में इस धारा के केन्द्र में इस्लाम धर्म है। इस्लामी संगठनों ने विगत दशकों में पूरे

विश्व में कई आतंकी हमले किये हैं। तालिबान, अल-काएदा, जैस-ए-मुहम्मद, इंडियन मुजाहिद्दीन तथा आई.एस.आई.एस. (ISIS) आदि इस्लामिक संगठन पूरे विश्व में कोहराम मचाये हुए हैं।

22.4 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद की प्रकृति

1. सर्वप्रथम, अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद एक सामूहिक क्रिया है न कि व्यक्तिगत। जैसा कि हम सब जानते हैं कि आतंकवाद में हिसा संलग्न है। परन्तु यहाँ हिंसा का मतलब व्यक्तिगत हिंसा जो कि एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति से होती है, उस से अलग है। अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद या तो किसी एक निर्दिष्ट राष्ट्र के या किसी सांस्कृतिक, धार्मिक संप्रदाय का असंतुष्ट समूह होते हैं। जैसे कि अल काएदा या आई.एस.आई.एस. का विरोध पूरे गैर इस्लामिक समाज तथा राज्यों से है।

2. आतंकवाद मूलत; राजनैतिक होता है। प्रत्येक आतंकवादी संगठन या समूह का उद्देश्य, लक्ष्य, विचार एवं उनको प्राप्त करने का साधन निश्चित एवं स्पष्ट होता है। सामान्यतः आतंकवादी संगठन, चाहे वे राष्ट्रीय हों या अन्तर्राष्ट्रीय हों, अपने सिद्धांत, विचार तथा लक्ष्यों को श्रेष्ठ मानते हैं। वे सम्पूर्ण रूप से अपने विचारों के लिए समर्पित होते हैं। इनके समूह के प्रत्येक व्यक्ति को विचारों के विषय में प्रशिक्षण दिया जाता है।

3. अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद किसी विशेष राष्ट्र के परिधि तक सीमित नहीं है वरन् अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपने विचारों और उद्देश्यों को सिद्ध करने की कोशिश करता है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने इसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर फैला दिया है। आतंकवादी राज्य की औपचारिक सत्ता का व्यवहार करने के विरुद्ध होते हैं।

4. 1970 के दशक के बाद हुए तकनीकी विकास भी अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद के बढ़ावा में सहायक हुआ है। वैज्ञानिक तकनीक जैसे इन्टरनेट के प्रयोग द्वारा आतंकवाद आदि हिंसात्मक साधनों का उपयोग कर लोगों के जान-माल को क्षति पहुंचा रहे हैं।

5. आतंकवाद मानव समाज तथा राष्ट्र के विरूद्ध होता है। सामान्य रूप से अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद या तो किसी एक निर्दिष्ट राष्ट्र के या किसी सांस्कृतिक, धार्मिक संप्रदाय का असंतुष्ट समूह होते हैं जो भय तथा हिंसा के माध्यम से अपनी बात मनवाना चाहते हैं। निश्चित रूप से अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद का उद्देश्य राजनैतिक होता है। पर आंतकवादी संगठन की औपचारिक सत्ता का व्यवहार करने के विरूद्ध होते हैं।

22.5 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद के कारण

आतंकवाद के विभिन्न कारण सामने आते हैं। ऐसा कोई एक निश्चित कारण नहीं बतलाया जा सकता जिसके आधार पर हम ये अनुमान लगा सके कि इसकी उपस्थिति आतंकवाद को प्रोत्साहन देती है। विद्वानों ने आतंकवाद के कारणों को मनोवैज्ञानिक, वैचारिक और सामरिक रूपों में विभाजित किया है।

22.5.1 मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

आतंकवाद में लिप्त रहने वाले या सीधा सम्बन्ध उस व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक अवस्था से है। सत्ता प्राप्ति की इच्छा और वैमनस्य का भाव इसे प्रोत्साहित करने का कार्य करते हैं।

उदाहरण के लिए, 1893 में ऐंगस्टीन वलिएन्त ने फ्रांसीसी प्रतिनिधियों के कक्ष में बम गिराया। अपने इस कृत्य के पीछे की वजह उसने मध्यम वर्ग के प्रति घृणा बताई। असल में वलिएन्त आर्थिक और सामाजिक सफलता को हिंसा के प्रयोग द्वारा बर्बाद करना चाह रहा था। इसका लक्ष्य कोई वैचारिक या सामरिक न होकर सिर्फ अपने कार्य के लिए लोगों का ध्यान आकर्षण करना था।

22.5.2 वैचारिक दृष्टिकोण

विचारधारा से तात्पर्य निश्चित मूल्यों और सिद्धांतों से है जिसके माध्यम से कोई समूह अपने निश्चित लक्ष्यों और उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्यरत रहता है। विचारधारा स्वयं में धर्म और राजनैतिक दर्शन और कार्यक्रमों को समाहित करती हैं। आयरिश रिपब्लिकन आर्मी, लिट्टे बदर मेहोफ्फ विचारधारा से प्रोत्साहित आतंकवादी समूह हैं, आयरिश रिपब्लिकन आर्मी का मुख्य एजेंडा आयरलैंड को ब्रिटिश शासन से मुक्ति और समूचे आयरलैंड की एकता स्थापित करना है। इस राजनैतिक दर्शन से प्रेरित आयरिश रिपब्लिकन आर्मी लम्बे समय से संघर्षरत है। उसी तरह श्रीलंका में तमिल मूल के लोगों हेतु एक अलग प्रदेश के निर्माण के लिए लिट्टे संघर्ष में लिप्त हैं। बदर मेंहोफ्फ एक आतंकवादी समूह है जिसका निर्माण मध्यम वर्ग के उन लोगों ने किया है जो पूँजीवाद के खिलाफ हैं और जिसका उद्देश्य जर्मनी में पूंजीवादी ढांचे को खत्म करना है।

आतंकवाद को राजनीतिक तंत्र की विफलता के तार्किक विस्तार के रूप में देखा जाता है। जब कभी जनता की परेशानियों को सरकार तवज्जो नहीं देती और लोगों की अभिलाषाओं को जबरन कुचलने के लिए आतुर रहती है तो लोग आतंक का सहारा लेने के लिए कदम बढ़ाते हैं। इस पक्ष से आतंकवाद एक समूह के लक्ष्यों और उद्देश्यों के तार्किक विश्लेषण और जीत की आश्वस्ति का परिणाम है। यदि जीत, विरोध के पारंपरिक साधनों से संभव न हो तो आतंकवाद एक बेहतर विकल्प हो सकता है। उदाहरण के लिए दक्षिण अफ्रीका में अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस द्वारा आतंकवाद का प्रयोग सभी राजनैतिक विकल्पों की विफलता के बाद किया। हालांकि सिर्फ एक व्यक्ति ही स्वयं को राजनैतिक प्रक्रिया द्वारा ठगा हुआ महसूस नहीं करता बल्कि राज्य भी अपने सामरिक हितों की पूर्ति के लिए आतंकवाद का सहारा लेते हैं। उदाहरण के लिए 1988 में लीबिया ने अमेरिका और इंग्लैड द्वारा इसके राज्य क्षेत्र में की जा रही बमबारी के विरोध में लंदन से न्यूयॉर्क पैन ऍम 103 विमान में विस्फोट करने के लिए आतंकवादियों का सहारा लिया।

22.6 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद के उद्देश्य

आतंकवादियों का मुख्य उद्देश्य लोगों के बीच दहशत पैदा करना है ताकि उनकी मांगों को स्वीकार्यता मिल सके। आतंकवाद कोई प्रत्यक्ष, नियमित या केन्द्रीयकृत शैली नहीं है, इसका स्वरूप बदलता रहा है। आतंकवादी राज्य के विरुद्ध अपने मानदंड तथा शैली बदलते रहे हैं। उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए ये हिंसा का इस्तेमाल करने से भी नहीं चूकते। इसके अतिरिक्त उनकी कुछ और भी मांगें हो सकती हैं, जैसे -

1. अपने संगठन का अधिकाधिक प्रचार जिससे उनके संगठन को मान्यता मिल सके और जनसमर्थन हासिल हो सके।

2. एक छापामार, गुर्रिल्ला युद्ध के जरिये किसी राष्ट्र को कमजोर करना।

3. फिरौती की मांग को लेकर, मनुष्यों को बंधक बनाना, लूटपाट करना, सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुँचाना।

4. किसी देश की सुरक्षा, शांति व अखंडता के लिए हर समय खतरा उत्पन्न करने का प्रयास करना ताकि देश में भय व असुरक्षा का वातावरण बना रहे।

5. किसी देश की अलगाववादी शक्तियों को प्रोत्साहित करना ताकि देश में अस्थिरता की स्थिति बनी रहे।

6. किसी राज्य की मुक्ति के लिए संघर्ष करना।

7. अघोषित युद्ध के जरिये सरकार से असंतुष्ट युवाओं की भावनाओं को भड़काकर उन्हें चोरी छिपे गुमराह करना, और देश विरोधी कार्यों में लिप्त करना।

8. अपने छुद्र स्वार्थों की पूर्ति के लिए धर्म का दुरुपयोग करना, व धर्म की आड़ में आतंकी गतिविधियों को अंजाम देना, इस प्रकार ये इसे एक धार्मिक युद्ध जिहाद बना डालते हैं, और लोगों को इसमें प्रतिभाग करने के लिए उकसाते रहते हैं।

22.7 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादी संगठन

विश्व में सक्रिय कुछ आतंकवादी संगठनों के नाम निम्नलिखित हैं। ये संगठन कई स्थानों में सक्रिय हैं और आतंक का प्रसार करते हैं।

1. **अल-कायदा**- विश्व का सबसे खतरनाक आतंकवादी समूह जिसकी शुरूआत ओसामा बिन लादेन ने की तथा जिसे सितम्बर 9/11 की घटना का जिम्मेदार माना जाता है।

2. **अल-बद्र**- जम्मू कश्मीर में सक्रिय यह एक इस्लामिक आतंकवादी गुट है जिसे आई.एस.आई के साथ संलिप्त होने और जम्मू कश्मीर में हिंसा भड़काने का जिम्मेदार माना जाता रहा है।

3. **बोको हरम**- उत्तर पूर्वी नाइजीरिया में सक्रिय एक इस्लामिक आतंकवादी समूह। सामूहिक नरसंहार में लिप्त।

4. **हमास**- मध्य पूर्व में स्थित एक लडाकू समूह जिसकी उत्पत्ति पलेस्टाइन आन्दोलन को तेजी देने और उसे स्वतंत्र करने के लिए हुई थी।

5. **हरकत-उल-मुजाहिद्दीन**- पाकिस्तान में स्थित एक आतंकवादी गुट जो कश्मीर में सक्रिय है।

6. **इंडियन मुजाहिद्दीन**- पाकिस्तान में स्थित आतंकवादी संगठन लअश्करे-तोइबा का प्रमुख अंग जो भारत विरोधी गतिविधियों में सक्रिय रहता है। अहमदाबाद बम धमाकों (2008) और मुम्बई आतंकवादी हमलों के लिए जिम्मेदार।

7. **जैश-ऐ-मुहम्मदा**- कश्मीर में सक्रिय एक आतंकवादी संगठन, इसका मुख्य लक्ष्य कश्मीर को भारत से अलग करना है।

8. **अल-नुसरा**- सीरिया और लेबनान में सक्रिय अल-कायदा का एक संगठन।

9. **तंजीम लड़ाका दल**- सन् 1995 में यासेर अराफात द्वारा निर्मित एक समूह जिसका मुख्य उद्देश्य फलिस्तीनी इस्लामीकरण को रोकना था।

10. **विश्व युघुर कांग्रेस**- चीनी सरकार द्वारा प्रतिबंधित योधुरों की सामूहिक चेतना का प्रतिनिधित्व करता एक समूह जो निर्वासित योघुर लोगों के पुनर्वास के लिए है।

22.8 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद की रोकथाम के लिए विश्व के देशों के बीच संधियाँ

आतंकवाद से लड़ने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर अनेक संधियों और समझौते हुए हैं। विश्व में बढ़ रही आतंकी गतिविधियों ने समूचे विश्व का ध्यान आकृष्ट किया है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस पर लगाम लगाने हेतु राष्ट्रों के बीच विभिन्न समझौते एवं संधियाँ हुई हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी कई कानून पारित किये हैं -

1. विमानों पर किये गए अपराधों एवं कतिपय अन्य कार्यों पर कन्वेंशन (1963), टोक्यो।
2. विमानों पर गैरकानूनी कब्जे के विरोध हेतु कन्वेंशन (1970), हेग
3. राजनायिक प्रतिनिधियों सहित अन्तर्राष्ट्रीय रूप से सुरक्षा प्राप्त लोगों के खिलाफ अपराधों के निरोध एवं दंड पर कर्न्वेशन (1973), न्यूयॉर्क
4. आतंकवाद की रोकथाम के लिए यूरोपीय कन्वेंशन (1977), स्ट्रासबर्ग
5. आणविक सामग्री की भौतिक सुरक्षा हेतु कन्वेंशन (1980), विएना
6. आतंकवादी बमबारी के निरोध के निमित्त अन्तर्राष्ट्रीय कन्वेंशन (1997)

22.9 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद की रोकथाम के उपाय

ऐतिहासिक रूप से देखा जाय तो आतंकवाद के विरुद्ध कई प्रतिक्रियाएं देखने को मिलती हैं। आतंकियों के खिलाफ हिंसा का उपयोग, समझौते का प्रयोग और तमाम अन्तर्राष्ट्रीय संधियों और नियमों के माध्यम से आतंकवाद पर लगाम लगाने की कोशिश की गयी है। हालाँकि ये तीनों विकल्प, राज्य-सरकार के पास मौजूद विकल्पों में सबसे प्रचलित हैं। आतंकवाद के खिलाफ ताकत और हिंसा का प्रयोग समय समय पर प्रदर्शित होता है। अमेरिका का तालिबान के विरुद्ध सैन्य शक्ति का प्रयोग इसका एक उपर्युक्त उदाहरण है। 1988 में ब्रिटेन की स्पेशल एयर सर्विसेज के सदस्यों ने आयरिश रिपब्लिकन आर्मी के तीन सन्देहास्पद को गिब्राल्टर में गोली मार दी। बल का प्रयोग इस घटना में किसी आतंकवादी संगठन के सन्देहास्पद सदस्यों के खिलाफ प्रयोग किया गया। बल प्रयोग के दो मायने हैं एक तो ''जैसे को तैसा'' यानि हिंसा का जवाब हिंसा से और दूसरा आतंकी गतिविधियों को पनपने से रोकने के लिए।

वार्तालाप आतंकवाद से निपटने का दूसरा तरीका है। हालांकि राष्ट्र सार्वजनिक रूप से आतंकी समूहों से वार्ता की बात स्वीकार नहीं करते लेकिन वे गुप्त रूप से दूसरी नीति अपनाते हैं, उदाहरण के लिए ब्रिटेन काफी अरसे से आयरिश रिपब्लिकन आर्मी और उसके राजनैतिक स्तम्भ सिन्न फें से वार्तालाप की बात को नकारता चला आ रहा था। लेकिन फिर भी आम दृष्टि से इतर वार्तालाप की प्रक्रिया संपूर्ण हुई और गुड फ्राइडे सरीखे सहमति पत्र सामने आये जिन्होंने

उत्तरी आयरलैड में आतंकी हिंसा को खत्म करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। एक दूसरा उदाहरण अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस और दक्षिण अफ्रीकी सरकार के बीच हुआ समझौता है। दक्षिण अफ्रीकी सरकार ने अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस को एक आतंकी संगठन करार देकर प्रतिबंधित किया हुआ था और उसके साथ किसी भी समझौते के कोई भी असार नहीं थे। फिर भी अप्रत्यक्ष रूप से वार्तालाप संभव हुई और समझौते हुए।

अन्तर्राष्ट्रीय संधियाँ आतंकवाद से जूझने की एक और कोशिश है। अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, जैसे संयुक्त राष्ट्र संधियाँ पारित करके राष्ट्रों के मध्य अत्यधिक राजनैतिक गतिविधियों को प्रोत्साहित करती हैं। उदाहरण के लिए, 1997 की आतंकी बम धमाकों के निवारण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संधि यह मांग करती है कि इस प्रकार की घटना को हत्या और आम संपत्ति को जबरन नुकसान पहुँचाने की आपराधिक श्रेणी के अंतर्गत रखा जाये। इस प्रकार का सहयोग में सुधार की अपेक्षा करता है। **ध्यान अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस पर लगाम लगाने हेतु राष्ट्रों के बीच विभिन्न समझौते एवं संधियाँ हुई हैं, संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी कई कानून पारित किये हैं जैसे :**

1. विमानों पर किये गए अपराधों एवं कतिपय अन्य कार्यों पर कन्वेंशन, (1963) टोक्यो।
2. विमानों पर गैरकानूनी कब्जे के विरोध हेतु कन्वेंशन, (1970) हेग
3. राजनयिक प्रतिनिधियों सहित अन्तर्राष्ट्रीय रूप से सुरक्षा प्राप्त लोगों के खिलाफ अपराधों के निरोध एवं दंड पर कन्वेंशन, (1973) न्यूयॉर्क
4. आतंकवाद की रोकथाम के लिए यूरोपीय कन्वेंशन, (1977) स्ट्रासबर्ग
5. आणविक सामग्री की भौतिक सुरक्षा हेतु कन्वेंशन, (1980) विएना
6. आतंकवादी बमबारी के निरोध के निमित्त अन्तर्राष्ट्रीय कन्वेंशन, (1997)

22.10 अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद की रोकथाम के लिए विभिन्न देशों में गठित संस्थायें

आतंकवाद से लड़ने के लिए विभिन्न देशों ने अपनी संस्थाएँ बनाई हैं जो उस देश के भीतर आंतकवादी गतिविधियों को नियंत्रित करने, कोई खुफिया जानकारी प्राप्त करने में सक्रिय रहती हैं।

- भारतः एन.एस.जी. (नेशनल सिक्यूरिटी गार्ड्स), ए.टी.एस. (एंटी-टेररिस्ट स्क्वाड), थन्डरबोल्ट, एन.आर.ए.
- चीनः स्नो लेपर्ड कमांडो यूनिट, बीजिंग स्वाट
- जर्मनीः यू.एस.के. (बवेरिया की राज्य पुलिस), जेड.यू.जेड., एस.ई.के. पुलिस, जी.एस.जी. 9 +
- फ्रांसः पुलिस दल जी.आई.पी.एन., रेड और गेंदामेर्र जी.आई.जी.एन +
- इस्रायलः यमम, मिस्ताराविम, शिन बेत
- जापानः केन्द्रीय त्वरित बल (सेंट्रल रेडीनेस फोर्स), स्पेशल सिक्यूरिटी टीम, स्पेशल असाल्ट फोर्स

- अमेरिकाः फेडरल एयर मार्शल सर्विस, एंटी-टेररिज्म स्पेशलिटी टीम्स, बोर्ताक, राज्य और क्षेत्रीय पुलिस की स्वाट टीमें।

22.11 उपसंहार

आतंकवाद के निश्चित कारणों की सही सही पहचान लगाना असंभव है। व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य निश्चित ही एक अहम् भूमिका निभाता है परन्तु किस हद तक, यह कहना असंभव है। कोई आतंकवाद की तरफ हिंसा के प्रति लगाव के कारण आकर्षित नहीं होता बल्कि अपनी विचारधारा के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए भी इस तरफ लोग झुकते हैं। कोई आतंक का प्रयोग सामरिक विकल्प के तौर पर राज्य के उद्देश्यों को बढ़ावा देने के लिए भी करते हैं। निश्चित ही आतंकवाद, मनोवैज्ञानिक, वैचारिक और सामरिक धरातल पर घट सकता है। और एक व्यक्ति आतंकवाद को अपनी वैश्विक दृष्टि के आधार पर अमल में ला सकता है। किसी समूह के लिए अपनी विचारधारा का प्रसाद के लिए आतंकवाद एक माध्यम हो सकता है। और कई व्यक्तियों और समूहों के लिए आतंकवाद का प्रयोग अपने सामरिक उद्देश्यों और लक्ष्यों की पूर्ति हो सकती है।

22.12 शब्दावली

1. **विचारधारा -** विचारधारा से तात्पर्य निश्चित मूल्यों और सिद्धांतों से है जिसके माध्यम से कोई समूह अपने निश्चित लक्ष्यों और उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्यरत रहता है।
2. **आतंकवाद** - आतंकवाद से तात्पर्य सामान्यतः उन गतिविधियों से लिया जाता है, जो आतंक पर आधारित है।
3. **वर्सेल्स की संधि - प्रथम विश्व युद्ध के उपरांत हुई संधि।** इस संधि ने यूरोपीय भू-भाग में साम्राज्यों को तोड़ने का कार्य किया और राष्ट्र संघ के अंतर्गत लाने का प्रयास किया।

22.13 सन्दर्भ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक शब्द या एक वाक्य में देने का प्रयास करेंः

1. विश्व में सक्रिय किन्हीं दो आतंकवादी संगठनों के नाम लिखिए?

   ----

2. भारत में सक्रिय किन्हीं दो आतंकवादी संगठनों के नाम लिखिए?

लघु उत्तरीय प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर दें :

1. आतंकवाद क्या है?

----

2. आतंकवाद के कारणों का वर्णन करें?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों का विस्तार में उत्तर दें।

1. अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद की प्रकृति पर एक लेख लिखिए?

----

2. आतंकवादियों के उद्देश्यों पर टिप्पणी कीजिये?

----

3. डेविड राप्पोपोर्ट ने अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद को कितने चरणों में विभाजित किया है? एक संक्षिप्त लेख लिखें?

22.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. आर. गुनारात्ना, इनसाइड अलकायदा, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, 2002
2. एस. जुनैद, टेरोरिज्म एण्ड ग्लोबल पावर सिस्टम्स, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, आक्सफोर्ड, 2005
3. आई.डी. ओनवुडिवे, द ग्लोबलाइजेशन ऑफ टेरर, आस्गेट, विटी, 2001
4. एम. सेज्म्यान, अंडरस्टैंडिंग टेरर नेटवर्क्स, यूनिवर्सिटी ऑफ पेंसिलवानिया प्रेस, 2004
5. के.पी. बाजपेयी, रूट्स ऑफ टेरोरिज्म, पेंगुइन, नई दिल्ली 2002
6. जे. बेलिस, एम. स्मिथ, पी. ओएन्स, ग्लोबलाईजेशन ऑफ वर्ल्ड पालिटिक्स ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, 2011

22.15 नोट

इकाई-23

संचार प्रौद्योगिकी में क्रान्ति एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध

इकाई की संरचना

23.0 उद्देश्य

23.1 भूमिका

23.2 तकनीकी संचार

23.3 नव अन्तर्राष्ट्रीय सूचना व्यवस्था

23.4 सूचना तकनीकी में क्रांति

23.5 अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध के लिए महत्व

23.5.1 राष्ट्र की क्षेत्रियता पर प्रश्न चिन्ह

23.5.2 अतिपारदर्शिता

23.5.3 वैश्विक जनमत

23.6 उपसंहार

23.7 शब्दावली

23.8 संभावित प्रश्न

23.9 संदर्भ ग्रन्थ

23.10 नोट

23.0 इकाई का उद्देश्य

इस इकाई में संचार प्रौद्योगिकी में आयी क्रांति के सन्दर्भ में चर्चा की गयी है, उसका उद्देश्य है -

1. संचार-तकनीकी क्रांति के सन्दर्भ में प्रकाश डालना।
2. इस क्रांति के फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों की प्रकृति में परिवर्तन पर चर्चा करना।
3. सूचना क्रांति के महत्व से अवगत कराना।

23.1 भूमिका

यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि संचार अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध का केन्द्र बिन्दु है। विभिन्न राष्ट्रों के मध्य आपसी संबंधों को संचार के माध्यम से दृढ़ता प्राप्त होती है। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में संचार के क्षेत्र में हुए नवीन तकनीकी आविष्कारों ने केवल व्यक्तियों के

बीच वरन् राष्ट्रों के बीच के संबंधों को भी एक नया आयाम दिया। आज संचार के नूतन माध्यम देखने को मिलते हैं जो लोगों के आपसी संबंध-निर्माण को गति प्रदान करते हैं। संचार, तकनीकी तथा गैर-तकनीकी माध्यमों से गतिशील होता है। भाषा तथा पर्यटन जैसे माध्यम गैर-तकनीकी रूप से संचार को गतिशीलता प्रदान करते हैं। तकनीकी संचार माध्यम में डाकसेवा, छापाखाना, रेडियो, टेलीविजन, दूरसंचार, टेलीफोन तथा कम्प्यूटर जैसे साधनों को लिया जा सकता है।

23.2 तकनीकी संचार

छापाखाने को सबसे पहला एवं टिकाउ संचार माध्यम माना जाता है जिसका आविष्कार सोलहवीं शताब्दी में हुआ। इसके माध्यम से विभिन्न देशों के बीच किताबों, मैगज़ीनों एवं लिखित विचारों का आदान-प्रदान प्रारम्भ हुआ जिसने अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों को नयी दिशा प्रदान की। डाक सेवा का प्रारम्भ उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य भाग में देखने को मिलता है। इसकी सहायता से न केवल राष्ट्र के अन्दर बल्कि विभिन्न राष्ट्रों के बीच भी सन्देश भेजना एवं प्राप्त करना आसान हो गया। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में अन्तर्राष्ट्रीय रेडियो प्रसारण ने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को एक नया आयाम प्रदान किया। बी0बी0सी0 एवं वोईस ऑफ अमेरिका जैसे रेडियो प्रसारण केन्द्र के श्रोताओं का विस्तार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हुआ। 1960 के दशक के बाद उपग्रह-आधारित दूरसंचार माध्यम अति महत्वपूर्ण हो गया है। सन् 1964 के टोक्यो ओलम्पिक खेलों के समय सिंसिम 3 एवं बाद में इन्तेल्सेट जैसे अन्तर्राष्ट्रीय संगठन वैश्विक संचार को नयी दिशा देने में कामयाब हुए। सूचना प्रौद्योगिकी क्रान्ति के कारण आज समूचा विश्व एक छोटे से गाँव में सीमित प्रतीत हो रहा है। आज एक राष्ट्र के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का क्षेत्र सिर्फ दूसरे राष्ट्र तक ही सीमित नहीं रहा है बल्कि सूचना प्रौद्योगिकी क्रान्ति ने यह समाज की दूसरे समाज से घनिष्ठता को बढ़ाया है। विश्व के किसी भी कोने में घट रही कोई भी घटना का हम घर बैठ सजीव प्रसारण देख सकते हैं और उस पर तत्काल विमर्ष भी कर सकते हैं। इस वैश्विक जुड़ाव (ग्लोबल कनेक्टिविटी) ने ग्लोबल विलेज के रूप में हमारे सम्मुख एक नयी अवधारणा को प्रस्तुत किया है जिसमें हम सभी किसी न किसी रूप में एक दूसरे से जुड़े हुए प्रतीत होते हैं।

23.3 नव अन्तर्राष्ट्रीय सूचना व्यवस्था

बीसवीं शताब्दी के मध्य भाग तक यह विश्व दो महायुद्ध अनुभव कर चुका था। विश्व शांति की कामना करने वाले विद्वान तथा राष्ट्रप्रमुख उन तरीकों की खोज में लगे थे जिससे राष्ट्रों के बीच शांति तथा विश्वास का सम्बन्ध बन सके। इसमें गुट निरपेक्ष आन्दोलन (Non-Alignment Movement) भी शामिल था। प्रारम्भ से ही गुट निरपेक्ष आन्दोलन ने समानता, परस्पर निर्भरता, तथा विकासोन्मुखी लक्ष्यों को अपनाया था जिसके तहत नव अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था (New International Economic Order) की परिकल्पना की गयी थी। इस नवीन परिकल्पना के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की शर्तों पर पुनर्विचार किया जाना आवश्यक माना गया। विभिन्न राष्ट्रों के द्वारा 1974 में इस व्यवस्था को पारित किया गया। इस व्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न राष्ट्रों के बीच में निरंतर संवाद तथा संचार अति आवश्यक माना गया। सन् 1973 में ही गुट निरपेक्ष आन्दोलन के सदस्यों ने अल्जिएर्स में संचार व्यवस्था का पुनर्गठन करने का संकल्प किया था। सन् 1976 में गुट निरपेक्ष आन्दोलन के नई दिल्ली घोशणापत्र में सूचना के वि-उपनिवेशीकरण को प्रधानता दी गयी। गुट निरपेक्ष राष्ट्रों के अनुसार विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के मध्य चल रही संचार व्यवस्था का साम्राज्यवादी ताकतों ने अपनी आवश्यकतानुरूप निर्माण किया था। इसके कारण साम्राज्यवादी राष्ट्र संचार के केन्द्र में रहे। दूसरे राष्ट्र शक्ति क्रम में पीछे

होने के कारण संचार व्यवस्था में सक्रिय नहीं रहे हैं। नवीन आर्थिक व्यवस्था, जो राष्ट्रों का समान स्तर पर मूल्यांकन करती है, इस संचार व्यवस्था के अनुसार नहीं चल सकती थी। गुट निरपेक्ष राष्ट्रों की यह सोच एक नव-अन्तर्राष्ट्रीय सूचना व्यवस्था को प्रारम्भ करने में सफल रही है।

इस नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत 1975 में गुट निरपेक्ष संवाद केन्द्र (Non-aligned News Pool) का निर्माण किया गया जिसके तहत विभिन्न विकासशील राष्ट्रों के बारे में सूचना संग्रहीत की जाने लगी। 1977 में गुट निरपेक्ष राष्ट्रों ने अपने रेडियो संचार संगठनों को साझा किया जिसके तहत इन संगठनों को गुट निरपेक्ष राष्ट्रों के बीच में संवाद बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया गया। परिणामस्वरूप, वैश्विक संचार व्यवस्था की समस्याओं को अध्ययन करने के लिए 1978 में यूनेस्को के द्वारा मैकब्राइड आयोग (MacBride Commission) का गठन किया गया। अपने प्रतिवेदन 'अनेक आवाज, एक विश्व' (Many Voices, One World) में आयोग ने एक नवीन वैश्विक सूचना तथा संचार व्यवस्था (New World Information and Communication Order) के निर्माण की आवश्यकता पर जोर दिया। इस व्यवस्था का मुख्य लक्ष्य वैश्विक संचार का लोकतंत्रीकरण तथा विकासशील राष्ट्रों के नागरिकों को विकसित राष्ट्रों में जोड़ना रहा। इस आयोग ने नवीन संचार व्यवस्था के क्रियान्वयन में यूनेस्को को विशेष भूमिका प्रदान की जिसके परिणामस्वरूप 1985 की संयुक्त राष्ट्र महासभा में नवीन वैश्विक सूचना तथा संचार व्यवस्था को एक निरंतर प्रक्रिया के रूप में देखा गया।

23.4 सूचना तकनीकी में क्रान्ति

1980 के दशक के मध्य में यूरोप एवं आस्ट्रेलिया द्वारा इन्टरनेट को सार्वजनिक सेवाओं के प्रयोग में लाया गया। एशिया में 1990 के पूर्वार्ध में इन्टरनेट का आगमन हुआ। इन्टरनेट ने सूचना के आदान-प्रदान के क्षेत्र में एक क्रान्ति कर दी है। इसके कारण आज अति कम समय एवं अति कम दाम में विश्व के किसी भी प्रान्त में आसानी से सम्पर्क स्थापित किया जा सकता है। इसी कारण आज बिचौलियों से संचार के प्रसार को मुक्त किया जा सका है, आज संचार एक मुक्त क्षेत्र है। परिणामस्वरूप, आज केवल राष्ट्र ही नहीं विद्वान एवं समाज के विभिन्न समूह इन्टरनेट के माध्यम से अपनी बातों को दूसरे राष्ट्रों तथा समाजों तक आसानी से पहुँचा सकते हैं।

23.5 अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध के लिए महत्व

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध के लिए संचार की क्रांति का विशेष महत्व है जिसकी आगे विवेचना की गयी है।

23.5.1 राष्ट्रों की क्षेत्रीयता पर प्रश्नचिन्ह

नयी संचार तकनीक ने राष्ट्रों की सम्प्रभुत्ता के समक्ष कई चुनौतियाँ प्रस्तुत की है। संप्रभुता को यदि पारम्परिक अर्थ में देखा जाये तो यह किसी भी राष्ट्र की वह शक्ति है जिसके द्वारा एक राष्ट्र स्वयं की सीमाओं को किसी दूसरे राष्ट्र के आक्रमण से सुरक्षित करता है, अपनी प्राकृतिक सम्पदा और संसाधनों को रक्षित करता है और किसी अन्य राष्ट्र के हस्तक्षेप के बगैर अपने राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक तत्वों का चुनाव करता है।

संप्रभुता के उपरोक्त सिद्धान्त से ही ''सूचना सम्प्रभुता'' का सिद्धान्त प्रकट होता है जिसके अनुसार राष्ट्र संचार और सूचना के क्षेत्र में पूर्ण सम्प्रभुता और क्षेत्रीय एकता का अधिकार रखते हैं। हालांकि, सन्देश निर्माण, प्रसार और प्राप्त करने की नई संचार और सूचना तकनीकी किसी राष्ट्र की सीमाओं का आदर नहीं करती। सूचना के इस उद्भव ने समय समय पर कई ऐसे मुद्दों को जन्म दिया है जिसने राष्ट्रीय सम्प्रभुता के तकनीकी सूचना के प्रवाह, राष्ट्रीय संचार सुविधाओं का विकास इत्यादि पर नियंत्रण को प्रभावित किया है।

23.5.2 अति पारदर्शिता

संचार क्रांति, जिसके अग्रदूत संचार उपग्रह और कम्प्यूटर यन्त्र रहे हैं, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अपना प्रभाव दिखाने लगी है। हालांकि इस संचार तकनीक के प्रभाव का एकदम सही-सही अनुमान लगाना जटिल कार्य है परन्तु एक बात स्पष्ट रूप से कही जा सकती है कि परिचित भू-भाग निरंतर परिवर्तित हो रहा है। लगभग सभी समाज छिद्रिल हो गये हैं। प्रमुख तकनीकों के अभिसरण के कारण राष्ट्रीय संचारों पर से नियंत्रण खोने लगी हैं। उपग्रह, पारम्परिक भौगोलिक ज्ञान और दूरी की धारणाओं को निरर्थक साबित कर देते हैं। केबिल स्थानीय प्रदाता व्यवस्था को बढ़ाते हैं और दूरस्थ संकेतों को सोख लेते हैं। कम्प्यूटर सूचना को एक दूसरे तक प्रसारित, प्रवाहित एवं हस्तांतरित करते हैं। जब राष्ट्र, सन्देश के निर्माण, प्रसार और ग्राह्यता के ऊपर से नियंत्रण खो देते हैं तो संचार तकनीक के परा-राष्ट्रीय चरित्र के कारण वे तकनीकी विफलता और असुरक्षा जैसी नयी समस्याओं से जूझते नज़र आते हैं। आज हम एक नये प्रकार के वैश्विक समुदाय का उद्भव देख रहे हैं जिसमें गैर-सरकारी संगठन जैसे परा-राष्ट्रीय संस्थाएँ, बहुराष्ट्रीय निगम एक अहम् भूमिका अदा कर रहे हैं। संचार क्रांति ने इन कारकों के उत्कर्ष में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। पूर्व में दरकिनार किये गए गैर-सरकारी संगठन आज अपनी बढ़ी हुई शक्ति एवं विश्वभर में पहुँच की क्षमता के कारण एक अहम् वैश्विक कारक के रूप में उभरे हैं। संयुक्त राष्ट्र और अन्य दूसरी वैश्विक संस्थाओं में केन्द्रीय भूमिका का निर्वहन करते हुए आज गैर-सरकारी संगठन और नागरिक प्रचार समूह, पर्यावरण संरक्षण, निःशस्त्रीकरण, मानव अधिकार, उपभोक्ता सम्बन्धी अधिकार इत्यादि जैसे मुद्दों को उठा रहे हैं, जिनका दायरा स्थानीय और राष्ट्रीय सीमाओं से बँधा हुआ नहीं है। एक पुख्ता प्रमाण वैश्विक नागरिक समाज (सिविल सोसाइटी) का उद्भव है जो हमारे सामूहिक जीवन का एक अभिन्न अंग बन चुका है जो न तो बाजार का भाग है और न ही सरकार का, परन्तु गैर-सरकारी संगठनों और नागरिक प्रचार समूहों का यहाँ हमेशा भरमार रहती है।

23.5.3 वैश्विक जनमत

संचार तकनीक एक वैश्विक जनमत के आविर्भाव में भी सहयोग कर रही है। वैश्विक जनमत, एक वैश्विक नागरिक समाज के उदय होने का एक और पुख्ता सबूत है। वैश्विक जनमत दो प्रकार की समस्याओं से उत्पन्न हुआ है। पहला वर्ग अपार फैली हुई राष्ट्रीय समस्याओं का है जिसमें, भुखमरी, सामाजिक विषमताएं, ऊर्जा संकट, विकास न होना, प्रमुख हैं और दूसरी तरफ वह समस्याएं हैं जिनका चरित्र वैश्विक है जैसे, विकास, पर्यावरण, निःशस्त्रीकरण एवं मानवाधिकार।

राजनेता अब पारंपरिक तथा घरेलू जनमत पर ही आश्रित नहीं हैं अपितु एक बड़े वैश्विक परिदृश्य पर उभर रहे जनमत की तरफ रूझान दिखा रहे हैं। पूर्व-विद्युत युग में, राजनेता यह

मानते थे कि वे घरेलू एवं विदेशी जनमत पर अपना नियंत्रण स्थापित कर सकते हैं, समाचार माध्यम भी विदेशों में प्रकाशित होने वाले संपादकीय और विभिन्न मतों को शायद ही उद्धृत करते थे। लेकिन आज, उन्नत प्रौद्योगिकी तथा धैर्यपूर्वक किये गए प्रतिचयन ने राज्य सरकार और समाचार माध्यमों के लिए यह जानना आसान कर दिया है कि आखिर बाहरी जनता क्या विचार कर रही है। सरकारें अकसर अपने कार्यों को अपने और बाहरी जनता के बीच प्रचारित करती हैं।

23.6 उपसंहार

आज के युग में सूचना तथा प्रौद्योगिकी समग्र विश्व में राष्ट्रों के मध्य सम्बन्ध को प्रभावित करता है। इसमें अन्तर्राष्ट्रीय संबंधो की प्रकृति जटिल हो गयी है। क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में इसके कारण गुणात्मक परिवर्तन परिलक्षित हो गया है। पूरी दुनिया सिमट कर एक गाँव के रूप में परिवर्तित हो गई है। इसलिए दुनिया के किसी भी कोने की कोई घटना दूसरे अन्य कोनों पर तत्काल जानकारी में आ जाती है। उसका प्रभाव अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध पर पड़ना स्वभाविक है।

23.7 शब्दावली

1. **गुट निरपेक्ष आन्दोलन -** शीत युद्ध के समय राष्ट्रों का एक ऐसा गुट जो अमेरिका एवं रूस से समान दूरी रखता रहा।
2. **गैर-उपनिवेशीकरण-**इंग्लैण्ड तथा दूसरे यूरोपीय साम्राज्यवादी शक्तियों के नियंत्रण से औपनिवेशिक राष्ट्रों की स्वतन्त्रता।
3. **''सूचना संप्रभुता'' का सिद्धान्त -** इस सिद्धान्त के अनुसार राष्ट्र संचार और सूचना के क्षेत्र में पूर्ण संप्रभुता और क्षेत्रीय एकता का अधिकार रखते हैं।
4. **नव अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था -** गुट निरपेक्ष आन्दोलन की एक परिकल्पना जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की शर्तों पर पुनर्विचार किया जाना आवश्यक माना गया ताकि विकसित और विकासशील देशों के बीच समता स्थापित की जा सके जिससे विकासशील देश भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सके।

23.8 संभावित प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक शब्द या एक वाक्य में देने का प्रयास करें।

1. सर्वप्रथम इन्टरनेट का प्रयोग कब और कहाँ देखने को मिलता है?

   ....

   ....

2. गुट निरपेक्ष संवाद केन्द्र का निर्माण कब हुआ?

   ....

   ....

लघु उत्तरीय प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर दें।

3. यूनेस्को के द्वारा मैकब्राइड आयोग का गठन कब किया गया और क्यों?

   ....

   ....

4. गुट निरपेक्ष आन्दोलन का नई दिल्ली घोषणापत्र कब जारी किया गया और उसके क्या प्रमुख बिन्दु थे?

   ....

   ....

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के विस्तार में उत्तर दें।

1. संचार व्यवस्था से आप क्या समझते हैं? अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध में इसके महत्व की विवेचना कीजिये?

   ....

   ....

2. संचार क्रांति किस प्रकार एक वैश्विक जनमत के निर्माण में सहयोग कर रही है? स्पष्ट कीजिये।

   ....

   ....

23.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. एम0 आल्ब्रो, द ग्लोबल एज, पॉलीटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1996
2. एस0 डी0 क्रेज्नर, ग्लोबल कम्यूनिकेशंस एण्ड नेशनल पावर, वर्ल्ड पालिटिक्स, 1991, पृ0 336-66
3. जे0 बेलिस, एस0 स्मिथ, पी0 ओएन्स, ग्लोबलाइजेशन ऑफ वर्ल्ड पालिटिक्स, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, 2011
4. एम0 कास्टेलस, राइज ऑफ द नेटवर्क सोसाइटी, ब्लैकवेल, ऑक्सफोर्ड, 2000
5. एच0 जेंकीन्स, डी0 थर्बर्ण, डेमोक्रेसी एण्ड न्यू मीडिया, एम0 आई0 टी0 प्रेस, कैम्ब्रिज, 2004

23.10 नोट

....

....

....

....

नोट

नोट